संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

मूल्य : रु. ६/-
अंक : १८०
दिसम्बर २००७

गीता जयंती
२० दिसम्बर

उत्तम भक्त की पहचान क्या ?

पृष्ठः १२

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥

उस ज्ञान को तू तत्त्वदर्शी ज्ञानियों के पास जाकर समझ, उनको भलीभाँति दण्डवत् प्रणाम करने से, उनकी सेवा करने से और कपट छोड़कर सरलतापूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्म-तत्त्व को भलीभाँति जाननेवाले ज्ञानी महात्मा तुझे उस तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे । (गीता : ४.३४)

परम पूज्य बापूजी के आत्मसाक्षात्कार दिवस पर निकाली गयी संकीर्तन यात्राओं के दृश्य।

कोलकाता (प.बंगाल)

रेवाड़ी (हरियाणा)

चेन्नई (तमिलनाडु)
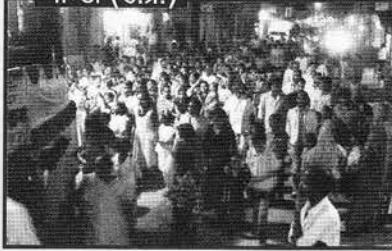
गोण्डा (उ.प्र.) | सतना (म.प्र) | दौंड, जि. पुणे (महा.)

ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

वर्ष : १८ अंक : १८०
दिसम्बर २००७ मूल्य : रु. ६-००
मार्गशीर्ष-पौष वि.सं.२०६४

सदस्यता शुल्क

भारत में
(१) वार्षिक : रु. ६०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक : रु. २००/-
(४) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में
(१) वार्षिक : रु. ८०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १५०/-
(३) पंचवार्षिक : रु. ३००/-
(४) आजीवन : रु. ७५०/-

अन्य देशों में
(१) वार्षिक : US $ 20
(२) द्विवार्षिक : US $ 40
(३) पंचवार्षिक : US $ 80
(४) आजीवन : US $ 200

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	१२०	५००
नेपाल, भूटान व पाक में	१७५	७५०
अन्य देशों में	US $ 20	US $ 80

कार्यालय : 'ऋषि प्रसाद', श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
ऋषि प्रसाद से संबंधित कार्य के लिए फोन नं. : (०७९) ३९८७७७१४, ६६११५७१४.
अन्य जानकारी हेतु फोन : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८, ६६११५५००.
e-mail : ashramindia@ashram.org
: ashramindia@gmail.com
web-site : www.ashram.org

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, ''सुदर्शन'', मिठाखली अंडरब्रीज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद - ३८०००९. गुजरात
सम्पादक : श्री कौशिकभाई वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा
श्रीनिवास

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक अथवा सदस्यता क्रमांक अवश्य लिखें। पता-परिवर्तन हेतु एक माह पूर्व सूचित करें।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रम

सावधान ! यौन शिक्षा नहीं, युवाधन सुरक्षा

२० वर्ष की उम्र तक मस्तिष्क का 'डोर्सल लेटरल प्रिफ्रोन्टल कोर्टक्स' नाम का हिस्सा अविकसित रहता है, जो निर्णय करने में महत्त्वपूर्ण काम करता है । इसलिए २० वर्ष से पूर्व कभी-कभी तेजस्वी किशोर-किशोरियाँ मूर्खतापूर्ण कार्य कर बैठते हैं । क्योंकि उनमें तब परिणामों के विचार करने की योग्यता नहीं होती ।

मनुष्य केवल अज्ञान के कारण ही गलतियाँ करता है ऐसी बात नहीं है । अमेरिका के बड़े वयस्क लोग जिनको खूब यौन शिक्षा मिली है वे भी संयम के अभाव से ज्ञान के विपरीत आचरण करते हैं । अमेरिका में करोड़ों लोग एड्स आदि यौन संक्रमित रोगों से ग्रस्त हैं । यौन स्वेच्छाचार के कारण अमेरिका और केनेडा की कॉलेजों की छात्राओं में मानसिक अवसाद (Depression) और आत्महत्या के विचार एवं व्यवहार महामारी की तरह फैल रहे हैं । अतः भारतीय पद्धति से, आश्रम से प्रकाशित 'युवाधन सुरक्षा' पुस्तक की पद्धति से यौन संयम का प्रचार होना चाहिए न कि यौन शिक्षा से किशोर-किशोरियों को भड़काया जाय । इसके कटु परिणाम सामने आ रहे हैं ।

अमेरिका में हर साल डेढ़ करोड़ नये विद्यार्थी यौन संक्रमित रोगों से ग्रस्त होते हैं और दो करोड़ लोग एच.पी.वी. से ग्रस्त हो जाते हैं । डॉक्टरों, दवाई की कंपनियों और कोर्पोरेशनों को अरबों डॉलर की कमाई होती है । आज से ४० साल पहले जब लोग संयमी थे, तब सिर्फ दो यौन संक्रमित रोग थे, आज मुक्त यौनाचार के कारण २५ प्रकार के यौन संक्रमित रोग होते हैं । स्कूलों में यौन शिक्षा देने से यौन संक्रमित रोगों की समस्या और बढ़ गयी । कुछ नयी समस्याएँ भी पैदा हो गयी । कुँवारी माताओं की समस्या विश्व के विकसित देशों की जटिल समस्या है ।

इन्नोसन्टी रिपोर्ट कार्ड नं. ३, जो यूनिसेफ ने प्रकाशित की थी, के अनुसार २८ विकसित देशों में हर साल १३ से १९ वर्ष की १२,५०,००० किशोरियाँ गर्भवती हो जाती हैं । उनमें से ५,००,००० गर्भपात कराती हैं और ७,५०,००० कुँवारी माता बन जाती हैं । उनको प्रायः पढ़ाई छोड़नी पड़ती है । वे अल्पशिक्षित रह जाती हैं, दरिद्रता से ग्रस्त रहती हैं, क्योंकि बेरोजगार रहती हैं, डीप्रेशन से पीड़ित रहती हैं और पराधीन, निराश्रित रहती हैं । उनकी संतानें दरिद्रता व पिता के अभाव से सामाजिक तिरस्कार का भोग बनती हैं, स्कूल में विफल होती हैं, शराब, नशीली दवाइयों की व्यसनी होती हैं और अपराधों में संलग्न होती हैं । आगे जाकर वे भी किशोरावस्था में माता या पिता बनते हैं और यह विषचक्र चलता रहता है । कम निर्णायक शक्तिवाले किशोर-किशोरियों को यौन शिक्षा देना यौन विकारों को भड़काना है ।

पिछले दस वर्षों में अमेरिका की सरकार ने स्कूलों में संयम की शिक्षा के प्रचार के लिए एक अरब डॉलर से अधिक धन खर्च किया है ।

जब यौन शिक्षा आदि अनेक उपाय करने के बाद अमेरिका को संयम की शिक्षा की शरण लेनी पड़ती है तो भारत सरकार अभी से संयम की शिक्षा स्कूलों में देने के लिए प्रयास क्यों नहीं करती ? □

जीवन में श्रद्धा की जरूरत

- पूज्य बापूजी

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : **न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।** 'इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करनेवाला निःसंदेह कुछ भी नहीं है ।' **(गीता ४.३८)** वह ज्ञान किसे मिलता है ?

भगवान कहते हैं : **श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं...** श्रद्धालु मनुष्य को परमात्म-तत्त्व का ज्ञान प्राप्त होता है । जो था, है और रहेगा (परमात्मा) और जो नहीं था, नहीं है और नहीं रहेगा (जगत) - दोनों का रहस्य, ज्ञान उसके हृदय में प्रकट हो जाता है ।

कुछ लोग कहते हैं कि 'श्रद्धा की क्या जरूरत है ? हम श्रद्धा को नहीं मानते । हम पहले देखेंगे, विज्ञान से प्रमाणित करेंगे फिर मानेंगे ।' तो देखो भाई ! जो देखने का विषय है उसमें श्रद्धा नहीं करनी पड़ती । उसमें तो विवेक और विचार चाहिए । जो नहीं दिखता उसमें श्रद्धा करनी पड़ती है ।

आचार्य विनोबाजी भावे कहते थे कि ''क्या श्रद्धा ने ही अंध होने का ठेका लिया है ? 'अंधश्रद्धा' कहना यह महा अंधश्रद्धा है ।'' जो बोलते हैं 'अंधश्रद्धा-अंधश्रद्धा' उनसे पूछकर देखो कि तुमने बाप को देखकर माना है कि श्रद्धा से माना है ? अथवा विज्ञान से प्रमाणित किया है कि वह तुम्हारा बाप है ? पाठशाला में जो सीखा 'क ख ग... या ए बी सी डी...' वह श्रद्धा से माना कि विज्ञान से प्रमाणित किया ? श्रद्धा से माना । यदि व्रत आदि धर्माचरण करना अंधश्रद्धा है तो तुम्हारे बाप के बाप मानना भी अंधश्रद्धा है ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

अश्रद्दधानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परंतप ।
अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि ॥

'हे परंतप ! (धर्मयुक्त साधन करने में बड़ा सुगम और अविनाशी है । मेरे द्वारा कहे गये इस) धर्म में श्रद्धारहित पुरुष मुझको न प्राप्त होकर मृत्युरूप संसारचक्र में भ्रमण करते रहते हैं ।'

(गीता : ९.३)

जो श्रद्धा नहीं रखते उन्हें अंदर की शांति, अंदर का सुख शराब से लेना पड़ता है, लेडी और लेडे के डिस्को से लेना पड़ता है । इससे तो वारकरियों को धन्यवाद है कि 'विट्ठला... विट्ठला...' करके आनंदित होते हैं । जब डॉक्टर उपवास करने के लिए बोलते हैं तो वह मजबूरी हो जाती है लेकिन धर्म बोलता है कि वटसावित्री व्रत, एकादशी का उपवास करो तो यह स्वास्थ्य के साथ साधना और संयम बढ़ाने की कुंजी बन जाती है । इससे शरीर, मन और बुद्धि की शुद्धि होती है और भगवत्प्राप्ति का मार्ग खुल जाता है । यह अंधश्रद्धा नहीं वास्तविक श्रद्धा है । ज्ञानेश्वर महाराज, तुकाराम महाराज ज्ञान की निधि थे । समर्थ रामदास, एकनाथ महाराज, जीजाबाई आदि महानता को प्राप्त हुए तो क्या बिना श्रद्धा के हुए ?

व्यवहार में भी कई जगह श्रद्धा करनी ही पड़ती है। बस के ड्राइवर पर तथा हवाई जहाज के पायलट पर भी श्रद्धा करनी पड़ती है । जब यहाँ से उठाकर वहाँ रखनेवाले पायलट पर श्रद्धा करनी पड़ती है तो चौरासी का चक्कर मिटाकर परमात्मा से मिलानेवाले व्रत, उपवास और नियम पर श्रद्धा नहीं करें तो क्या करें भाई ? □

महापुरुषों, विद्वानों व शास्त्रों की दृष्टि में 'श्रद्धा'

✲ जहाँ बड़े-बड़े बुद्धिमानों की बुद्धि काम नहीं करती वहाँ एक श्रद्धा काम कर जाती है।

✲ श्रद्धा का अर्थ है आत्मविश्वास और आत्मविश्वास का अर्थ है ईश्वर पर विश्वास।

✲ हमारी श्रद्धा अखंड बत्ती जैसी होनी चाहिए। हमें तो प्रकाश दे लेकिन आसपास भी प्रकाश दे।

– महात्मा गाँधी

✲ श्रद्धा का अर्थ अंधविश्वास नहीं है।

– स्वामी विवेकानंदजी

✲ **श्रद्धा बिना धर्म नहिं होई।**

(श्रीरामचरित. उ.कां. : ८९.२)

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति।

'विवेकहीन और श्रद्धारहित संशययुक्त मनुष्य परमार्थ से अवश्य भ्रष्ट हो जाता है।'

(भगवद्गीता : ४.४०)

✲ देवताजन श्रद्धा की उपासना करते हैं। श्रद्धा से परम ऐश्वर्य मिलता है। हम श्रद्धा का प्रातःकाल, मध्याह्नकाल और सायंकाल आवाहन करते हैं और कामना करते हैं कि हे श्रद्धादेवी! तुम सदा हममें निवास करो। (ऋग्वेद)

✲ श्रद्धा-आस्था ही हमारे आदर्श की परिधि है। – स्वेट मार्डेन ❑

✲✲✲

देवताओं का प्रभातकाल : उत्तरायण

(उत्तरायण पर्व : १४ जनवरी)

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

उत्तरायण पर्व के दिवस से सूर्य दक्षिण से उत्तर की ओर चलता है। उत्तरायण से रात्रियाँ छोटी होने लगती हैं, दिन बड़े होने लगते हैं। अंधकार कम होने लगता है और प्रकाश बढ़ने लगता है।

जैसे कर्म होते हैं, जैसा चिंतन होता है, चिंतन के संस्कार होते हैं वैसी गति होती है; इसलिए उन्नत कर्म करो, उन्नत संग करो, उन्नत चिंतन करो। उन्नत चिंतन, उत्तरायण हो चाहे दक्षिणायन हो, आपको उन्नत करेगा।

इस दिन भगवान सूर्यनारायण का मानसिक ध्यान करना चाहिए और उनसे प्रार्थना करनी चाहिए कि हमें क्रोध से, कामविकार से, चिंताओं से मुक्त करके आत्मशांति पाने में, गुरु की कृपा पचाने में मदद करें। इस दिन सूर्यनारायण के नामों का जप, उन्हें अर्घ्य-अर्पण और विशिष्ट मंत्र के द्वारा उनका स्तवन किया जाय तो सारे अनिष्ट नष्ट हो जायेंगे, वर्ष भर के पुण्यलाभ प्राप्त होंगे।

'ॐ ह्रां ह्रीं सः सूर्याय नमः।' इस मंत्र से सूर्यनारायण की वंदना कर लेना, उनका चिंतन करके प्रणाम कर लेना। इससे सूर्यनारायण प्रसन्न होंगे, नीरोगता देंगे और अनिष्ट से भी रक्षा करेंगे। रोग तथा अनिष्ट का भय फिर आपको नहीं सतायेगा। **'ॐ ह्रां ह्रीं सः सूर्याय नमः।'** जपते

जाओ और मन-ही-मन सूर्यनारायण का ध्यान करो, नमन करो।

'ॐ सूर्याय नमः ।' मकर राशि में प्रवेश करनेवाले भगवान भास्कर को हम नमन करते हैं। मन-ही-मन उनका ध्यान करते हैं। बुद्धि में सत्त्वगुण, ओज और शरीर में आरोग्य देनेवाले सूर्यनारायण को नमस्कार करते हैं।

नमस्ते देवदेवेश सहस्रकिरणोज्ज्वल ।
लोकदीप नमस्तेऽस्तु नमस्ते कोणवल्लभ ॥
भास्कराय नमो नित्यं खखोल्काय नमो नमः ।
विष्णवे कालचक्राय सोमायामिततेजसे ॥

'हे देवदेवेश ! आप सहस्र किरणों से प्रकाशमान हैं। हे कोणवल्लभ ! आप संसार के लिए दीपक हैं, आपको हमारा नमस्कार है। विष्णु, कालचक्र, अमित तेजस्वी, सोम आदि नामों से सुशोभित एवं अंतरिक्ष में स्थित होकर सम्पूर्ण विश्व को प्रकाशित करनेवाले आप भगवान भास्कर को हमारा नमस्कार है।' (भविष्य पुराण, ब्राह्म पर्व : १५३.५०-५१)

उत्तरायण के दिन भगवान सूर्यनारायण के इन नामों का जप विशेष हितकारी है। **ॐ मित्राय नमः । ॐ रवये नमः । ॐ सूर्याय नमः । ॐ भानवे नमः । ॐ खगाय नमः । ॐ पूष्णे नमः । ॐ हिरण्यगर्भाय नमः । ॐ मरीचये नमः । ॐ आदित्याय नमः । ॐ सवित्रे नमः । ॐ अर्काय नमः । ॐ भास्कराय नमः । ॐ सवितृ सूर्यनारायणाय नमः ।**

उत्तरायण देवताओं का प्रभातकाल है। इस दिन तिल के उबटन व तिलमिश्रित जल से स्नान, तिलमिश्रित जल का पान, तिल का हवन, तिल का भोजन तथा तिल का दान- सभी पापनाशक प्रयोग हैं।

उत्तरायण पर्व पुण्य-अर्जन का दिवस है। उत्तरायण का सारा दिन पुण्यमय दिवस है; जो भी करोगे कई गुना पुण्यमय हो जायेगा। मौन रखना, जप करना, भोजन आदि का संयम रखना और भगवत्-प्रसाद को पाने का संकल्प करके भगवान को जैसे भीष्मजी कहते हैं कि 'हे नाथ ! मैं तुम्हारी शरण हूँ। हे अच्युत ! हे केशव ! हे सर्वेश्वर ! हे परमेश्वर ! हे विश्वेश्वर ! मेरी बुद्धि आपमें विलय हो।' ऐसे ही प्रार्थना करते-करते, जप करते-करते मन-बुद्धि को उस सर्वेश्वर में विलय कर देना। इन्द्रियाँ मन को संसार की तरफ खींचती हैं और मन बुद्धि को पटाकर भटका देता है। बुद्धि में अगर भगवद्-जप, भगवद्-ध्यान, भगवद्-पुकार नहीं है तो बुद्धि बेचारी मन के पीछे-पीछे चलकर भटकानेवाली बन जायेगी। बुद्धि में अगर बुद्धिदाता की प्रार्थना, उपासना का बल है तो बुद्धि ठीक परिणाम का विचार करेगी कि 'यह खा लिया तो क्या हो जायेगा ? यह इच्छा करूँ - वह इच्छा करूँ, आखिर क्या ?' - ऐसा करते-करते बुद्धि मन की दासी नहीं बनेगी। **ततः किं ततः किम् ?** - ऐसा प्रश्न करके बुद्धि को बलवान बनाओ तो मन के संकल्प-विकल्प कम हो जायेंगे, मन को आराम मिलेगा, बुद्धि को आराम मिलेगा।

ब्रह्मचर्य से बहुत बुद्धिबल बढ़ता है। जिनको ब्रह्मचर्य रखना हो, संयमी जीवन जीना हो, वे उत्तरायण के दिन भगवान सूर्यनारायण का सुमिरन करें, जिससे बुद्धि में बल बढ़े।

ॐ सूर्याय नमः... ॐ शंकराय नमः... ॐ गं गणपतये नमः... ॐ हनुमते नमः... ॐ भीष्माय नमः... ॐ अर्यमायै नमः... ॐ... ॐ...

उत्तरायण का पर्व प्राकृतिक ढंग से भी बड़ा महत्त्वपूर्ण है। इस दिन लोग नदी में, तालाब में, तीर्थ में स्नान करते हैं लेकिन शिवजी कहते हैं जो भगवद्-भजन, ध्यान और सुमिरन करता है उसको और तीर्थों में जाने का कोई आग्रह नहीं रखना चाहिए, उसका तो हृदय ही तीर्थमय हो जाता है। उत्तरायण के दिन सूर्यनारायण का ध्यान-चिंतन करके, भगवान के चिंतन में मशगूल होते-होते आत्मतीर्थ में स्नान करना चाहिए। ॐ... ॐ... ॐ... ❑

जीवन में मौत और मौत में जीवन

– पूज्य बापूजी

इस नश्वर दुनिया में जो आया है वह जायेगा ही, जो उत्पन्न हुआ है वह लय होगा ही, जो पैदा हुआ है वह मरेगा ही। यह विधि का अकाट्य विधान है। जो पैदा हुआ है उसे मरना ही है पर कैसे मरना चाहिए यह कोई नहीं जानता। यह वही जानता है जिसने जीते-जी मरकर देख लिया है।

सच्चे अर्थों में जीवन वही जी सकता है जिसको जीवन से मोह नहीं है और सच्चे अर्थों में मर वही सकता है जिसे मौत से भय नहीं है। यह विचित्र तथ्य है कि जिसको जीवन से आसक्ति है वह ठीक-से जी नहीं सकता और जिसको मौत से भय है वह ठीक-से मर नहीं सकता।

जीवन में मौत और मौत में जीवन छिपा है। जिसको मौत से भय नहीं है, जो मौत को ललकार सकता है, जो मौत की आँख-से-आँख मिला सकता है वही जीवन जी सकता है, जीवन का आनन्द भी वही ले सकता है।

जीयो तो ऐसा जीयो कि जिन्दगी निखर उठे।
मरो तो ऐसे मरो कि मौत भी चमक उठे ॥

हम न तो जीना जानते हैं और न ही मरना। हम तो मुर्दा जीवन जीते हैं। वह जीवन ही क्या है जिसमें प्रतिक्षण मौत का भय लगा हो ? यदि निर्भय जीवन जीने की कला सीखनी हो तो मरना सीखो और मरना सीखना है तो ऐसों का संग करो, ऐसों की शरण जाओ जिन्होंने मरकर जीना सीख लिया है। संतों की शरण जाओ। संत मरना सिखा देते हैं। संत ऐसा मरना सिखा देते हैं कि फिर बार-बार जन्मने-मरने का बंधन ही कट जाता है। इस दुःखमय बंधन से ही परे हो जाते हैं। वे आशिक बना देते हैं। वे अपने प्यारे आत्मदेव से अपनी डोर लगा देते हैं।

मरना उसे नहीं कहते जो मरकर खाक हो।
आशिक है वो जो मरने से पहले मर सके ॥

इसलिए यदि मनुष्य-जन्म सफल बनाना हो तो संतजनों का संग करो।

संगति कीजे संत की हरे और की व्याधि।
संगत न कीजे मूढ़ की आठों पहर उपाधि ॥

अपने इस दुर्लभ जीवन का अधिकांश भाग तो हम गैरजरूरी चीजों को इकट्ठा करने में ही व्यय कर देते हैं। जिस एक को पाने से सब पा लिया जाता है, जिस एक को जानने से सब जान लिया जाता है, वही सच्चा ज्ञान है, सच्ची विद्या है। ब्रह्मविद्या ही सच्ची विद्या है। हम इस असली विद्या की तरफ, आत्मविद्या की तरफ ध्यान नहीं देते जो सब विद्याओं का मूल है। रोटी कमाने की विद्या तो कोई भी पढ़ा सकता है परंतु यह ब्रह्मविद्या हर कोई नहीं पढ़ा सकता। यह विद्या तो ब्रह्मज्ञानी महापुरुष ही पढ़ा सकते हैं। यदि उनकी कृपा से संसारी तुच्छ वस्तुओं में सत्यबुद्धि करनेवाला एक साधारण जीव अपने अन्दर विराजमान शाश्वत आत्मतत्त्व को देखनेवाला बन जाय तो जीवन का इससे बड़ा अहोभाग्य और क्या हो सकता है!

बाह्य विद्या नश्वर विद्या है, थोथी विद्या है। बाह्य विद्या रोटी कमाने में मदद कर सकती है, धन कमाने में उपयोगी हो सकती है, यह व्यक्ति के थोथे अहंकार को मजबूत कर सकती है और

नर को नारायण से दूर ले जाने का काम कर सकती है। वह हर्ष दे सकती है और हर्ष के पीछे शोक का आना अनिवार्य है। वह सुख दे सकती है पर सुख के पीछे दुःख का आना अनिवार्य है। वह विद्या व्यक्ति को चौरासी लाख योनियों के चक्कर में भटका सकती है, चक्कर से मुक्ति नहीं दिला सकती और सब इसी नश्वर विद्या के पीछे लगे हैं। इसीमें विशेषज्ञता प्राप्त करने में लगे हैं। कैसे अधिक-से-अधिक भोग-सामग्री संसार को धोखा देकर इकट्ठी करूँ ? धोखा देनेवाला नहीं जानता कि वह संसार को धोखा नहीं दे रहा है बल्कि अपने-आपको ही धोखा दे रहा है। इन नश्वर चीजों के पीछे दौड़कर अपने शाश्वत आत्मा को पहचानने का जो सच्चा कर्तव्य है उसको ही भूल रहा है। अपने-आपको बहुत बुद्धिमान मानता है पर वह अपनेको व्यवहार में एक कुत्ते से भी गया-बीता साबित कर रहा है।

मनुष्य जिन्दगी भर काम्य वस्तुएँ इकट्ठी करता रहता है, फिर भी उसकी आवश्यकताएँ कभी पूरी नहीं होतीं। उसे कभी संतोष नहीं होता। उसकी शिकायत, उसकी 'यह मिले, वह मिले' की फरियाद कभी पूरी नहीं होती।

संत कहते हैं : हे मनुष्य ! तू शाहों का शाह है। तू क्यों अपने-आपको दीन बना रहा है ? बस फरियाद छोड़ दे, अपनी 'चाह' छोड़ दे। इसीने तुझे दीन बना रखा है। तू तो स्वयं शाहों का शाह है, तू स्वयं ही चाचा मिटकर अपनेको भतीजा मान रहा है। बस एक बार अपनी चाह मिटाकर तो देख ! तू खुद ही कह उठेगा :

हम खुदा होते गर न होता दिल में कोई मुद्दा।
ख्वाहिशात ने हमारी हमको बन्दा बना दिया ॥

संत तो रास्ता बताते हैं। हम भूल जाते हैं कि यह महान जीवन हमको उस परमात्मा से प्रेम करने के लिए, उससे एक होने के लिए मिला है। संत अथवा गुरु ऐसे जिन्दा दिलों को ढूँढ़ते हैं जो मालिक की तड़प में बेचैन हो सकें, जो मालिक के बिना रह नहीं सकें।

एक तो यह रास्ता ही बड़ा सँकरा, बीहड़, दुरूह है कि जहाँ पग-पग पर श्रद्धा डिगानेवाले मिलते हैं, फिर हममें गुरु के प्रति अश्रद्धा हुई तो समझो आगे का रास्ता बंद हो गया। भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं :

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥

'हे अर्जुन ! जितेन्द्रिय, तत्पर हुआ श्रद्धावान पुरुष ज्ञान को प्राप्त होता है। ज्ञान को प्राप्त होकर तत्क्षण भगवत्प्राप्तिरूप परम शांति को प्राप्त हो जाता है।' (गीता : ४.३९)

स्वामी विवेकानन्दजी अपने गुरुभाई को एक पत्र में लिखते हैं : 'ध्यान रहे - किसी भी प्रकार, किसी भी परिस्थिति में अपने गुरु के प्रति श्रद्धा न घटे। यदि गुरु के प्रति अपनी श्रद्धा घटी तो समझो वहीं तुम्हारा पतन हो गया।'

संत तो ऐसे बादल हैं जो हर जगह बरसते हैं। जहाँ मरुभूमि है, पथरीली भूमि है वहाँ भी और जहाँ उर्वर भूमि है वहाँ भी। हम यदि मरुभूमि बने रहे तो लाभ नहीं उठा पायेंगे। इसलिए उर्वर भूमि बन जायें। संत कहते हैं :

कोई पीवे प्याला प्रेम का तो मैं देवाँ भर भर भर।
पी के करेगा खुशियाँ नहीं तो ढूँढ़े दर दर दर ॥

संत रास्ता बताते हैं। हम उस पर चल पड़ें, प्रमाद न करें। यदि गफलत में रहे तो हमें जहाँ पहुँचना है वहाँ नहीं पहुँच पायेंगे, जो लक्ष्य है उसको नहीं हासिल कर पायेंगे और संसार की रंगीनियों में ही खो जायेंगे। फिर यम का डंडा हम पर लागू हो जायेगा। जैसे धोबी कपड़े को घुमा-घुमाकर पत्थर पर पटकता है, वैसे यम का डंडा हमको धुनेगा।

इसलिए समय रहते चेत ! संत के प्रति, अपने सद्गुरु के प्रति अनन्य श्रद्धा जगाकर गन्तव्य स्थान को पहचान के चल पड़। देर न कर, प्रमाद न कर अन्यथा विचार-विचार में जिन्दगी यों ही पूरी हो जायेगी।

मक्सदे जिन्दगी न खो, यूँ ही उम्र गुजारकर।
अक्ल को होश से जगा, होश को होशियार कर॥

मरना है तो अपने प्यारे को पाकर मरें, नश्वर के पीछे क्या मरना ! जो सदा रहे उसे पाकर मरें। मकान भी रहे, दुकान भी रहे, गप्पी, बंडलबाज दोस्त भी रहें और वह प्यारा भी मिले, यह नहीं हो सकता। रोटी की चिंता भी करते रहें, लोगों के कहने की चिंता भी करते रहें और मालिक से मिलना भी हो जाय ! धन्य है ऐसी बुद्धि ! बीज मिटे भी नहीं और पेड़ बनना चाहता है ! तेल तथा बाती भी बची रहे और प्रकाश भी मिल जाय ! नहीं ! यह नहीं हो सकता। दोनों बातें एक साथ नहीं हो सकतीं। अरे, वह उनको मिला है जिन्होंने अपने शीश तक की परवाह न की, अपने मान-अपमान की परवाह न की और चल पड़े। वे ही उस प्यारे के प्रेम का आस्वादन कर सके हैं।

प्रेम पियाला सो पिये, शीश दच्छिना देय।
लोभी शीश न दे सकै, नाम प्रेम का लेय॥

बार-बार मरनेवाली महत्त्वाकांक्षा को हरि के विरह में, पुकार में बह जाने दो। तभी समता, वैराग्य और विवेक का सूर्योदय होता है।

जिन्होंने उसे पाया है, जिन्होंने उससे प्रेम किया है उन्होंने समस्त संसार के विरोध की भी परवाह नहीं की; तभी पा सके थे, तभी उससे प्रेम कर सके थे।

निर्भय बनो। दुर्बलता को अपने जीवन में स्थान मत दो। जो डरता है उसे दुनिया डराती है। अपने विवेक को जगाओ। इस मिथ्या संसार से मोह मत करो। संसार के मिथ्यापन को जानो। संसार में रहो, व्यवहार करो पर निर्लेप होकर। दूसरे के हक-अधिकार का शोषण न करो। अपने हक-अधिकार को दब्बू बनकर, डरपोक बनकर जाने न दो। परम हक, परम अधिकार परमात्म सुख-परमात्म ज्ञान पाना तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है। इसके बिना क्रोध, लोभ, भय, शोक, दुःख से पिण्ड नहीं छूटेगा। निर्भय बनो। 'जीवन विकास, जीवन रसायन' छोटी-सी पुस्तक है। इसे जेब में रखो। बार-बार पढ़ो। भले दो-दो बातें ही पढ़ो। यह तुम्हें निःशोक बना देगी, निर्भीक बना देगी, निर्दुःख बना देगी। नश्वर शरीर में रहकर इसका उपयोग कर अपने शाश्वत आत्मस्वरूप को जान लो। यह शरीर मरे उसके पहले आप अपने सत् चित् आनंद विभु अमर स्वभाव को पहचान लो, पा लो।

मरो मरो सब कोई कहे पर मरना न जाने कोय।
एक बार ऐसा मरो कि फिर मरना न होय॥

और ऐसा मरना जो अमरत्व देता है, जिसमें वास्तविक जीवन छिपा है, यदि सीखना हो तो किन्हीं ज्ञानी महापुरुष की शरण में जाओ क्योंकि वे ही वास्तव में निर्भय होते हैं। उनको सौंप दो अपने-आपको, अपनी नाव की पतवार को। वे जन्म-मरण के बंधन से परे होते हैं। वे ऐसा मरना सिखायेंगे कि फिर कभी जन्म-मरण ही न हो, इस दुःखपूर्ण आवागमन का चक्कर ही छूट जाय। धन्य हैं ऐसे महापुरुष ! धन्य हैं ऐसे संत ! और धन्य हैं वे साधक जिनको उनकी शरण मिलती है, सूझबूझ मिलती है !

ॐ...! ॐ...!! ॐ...!!! ❑

ऋतधीतयो रुरुचन्त दस्माः।
सत्य विचारवाले और पराक्रमी जन यशस्वी होते हैं। **(ऋग्वेद : ४.५५.२)**

यश्चिकेत स सुक्रतुः।
जो विचारशील होता है, वह सत्कर्मी होता है। **(ऋग्वेद : ५.६५.१)**

जीवन का उद्देश्य जानो

- पूज्य बापूजी

जीवन के सर्वांगीण विकास में धन, सत्ता या क्रिया का इतना महत्त्व नहीं है जितना उद्देश्य का है। आप कितने भी कर्म करो, अगर आपका उद्देश्य ऊँचा नहीं है तो उनका फल छोटा व नाशवान होगा और आपकी यात्रा नश्वर की तरफ होगी।

एक होता है उद्देश्य सुन लेना, मान लेना। दूसरा है उद्देश्य को जानकर निहाल हो जाना। परमात्मा ने हमें मनुष्य-शरीर किस उद्देश्य से दिया है ? - यह पहचानना और उस उद्देश्य की पूर्ति हेतु दृढ़ता से लग जाना ही मनुष्य-जन्म का वास्तविक उद्देश्य है। यह मनुष्य-शरीर हमें अपनी इच्छा से नहीं प्राप्त हुआ है।

कबहुँक करि करुना नर देही।
देत ईस बिनु हेतु सनेही ॥

'बिना ही कारण स्नेह करनेवाले ईश्वर कभी दया करके जीव को मनुष्य-शरीर देते हैं।'

(रामचरित. उ.कां. : ४३.३)

अगर हमने अपना कोई कल्पित उद्देश्य बना लिया पर वास्तविक उद्देश्य नहीं जाना तो क्या मिलेगा ? युवावस्था में हम न जाने कितनी-कितनी तरंगों पर नाचते हैं : 'मैं वकील बनूँ, डॉक्टर बनूँ...' फिर भी जीवन की तृप्ति, पूर्णता देखने में नहीं आती। उद्देश्य अगर पूर्ण का नहीं है तो पूर्ण सुख, पूर्ण शांति, पूर्ण संतोष, पूर्ण जीवन के दर्शन नहीं होते। कोई उद्देश्य मानकर उसकी पूर्ति में लग जाना उद्देश्यविहीन लोगों की अपेक्षा अच्छा है पर धनभागी वे हैं जो उद्देश्य जान लेते हैं।

मनुष्य-जीवन क्यों मिला है ? क्या करके क्या पाना चाहते हो ? इतनी विघ्न-बाधाओं से घिरा हुआ मनुष्य-शरीर आखिर किस बात के लिए श्रेष्ठ माना जाता है ?

मनुष्य इतना विवेक विकसित कर सकता है और भारतीय सनातन संस्कृति में आपकी योग्यताओं को विकसित करने की ऐसी सुन्दर व्यवस्था है कि आप निर्गुण-निराकार सृष्टिकर्ता भगवान को सगुण-साकार रूप में प्रकट कर सकते हैं। उन्हें अपना मित्र, पुत्र इतना ही नहीं, शिष्य भी बना सकते हैं। इतनी योग्यताएँ और सामर्थ्य आपमें छुपा है। अगर किसीने ऊँचा उद्देश्य बना लिया तो सत्स्वरूप परमात्मा उसके हृदय में भी प्रकट हो जायेगा, जैसे गुरुनानकजी, संत कबीरजी, सदना, मौलाना जलालुद्दीन रूमी, पूज्य लीलाशाहजी बापू के हृदय में प्रकट हो गया था। उद्देश्य अगर ठीक से जान लिया तो उसकी पूर्ति में अधिक श्रम नहीं है, इतनी कठिनता नहीं है जितनी सांसारिक उद्देश्य की पूर्ति में है।

सही उद्देश्य क्या है ? आप हिन्दू, मुसलिम, पारसी, यहूदी... जो भी हो, सभीकी जिगरी जान सच्चिदानन्द आत्मा है। 'सत्' माने जो सदा रहे। आप सदा रहते हैं, मरने के बाद भी रहते हैं, यह आपका 'सत्' अंश है। सच्चिदानन्द के 'सत्' अंश से सत्ता, शक्ति मिलती है और 'चित्' अंश से ज्ञान उत्पन्न होता है। आप चाहे जिस जाति-पंथ के हो, कुछ-न-कुछ ज्ञान तो है ही। कीड़े-मकोड़ों को भी पेट पालने आदि का ज्ञान है। यह सच्चिदानन्द के 'चित्' अंश से है। 'आनन्द' अंश से सुख उत्पन्न होता है।

सभीका उद्देश्य है - सच्चिदानन्द अर्थात् सदा रहनेवाले ज्ञानस्वरूप, आनन्दस्वरूप को पाना । इसकी पूर्ति के लिए क्या करें ? हम मृत्यु से न डरें, न किसीको डरायें । दूसरे के व्यवहार से, चतुराई से बेवकूफ न बनें, न ही दूसरे को बेवकूफ बनायें । हम न दुःखी हों और न दूसरे को दुःखी करें । असली उद्देश्य जान लिया तो 'सत्', 'चित्' और 'आनन्द' - आपके ये तीनों स्वभाव जाग्रत हो जायेंगे । ऐसा कौन है जो आनन्द नहीं चाहता, ज्ञान नहीं चाहता, शाश्वतता नहीं चाहता ? सभी चाहते हैं । सेठ, साहूकार आदि बनकर आप शाश्वत नहीं हो सकते हैं । इसलिए जो शाश्वत है उसको जानने का, उसका आनन्द पाने का उद्देश्य हो । 'मेरा उद्देश्य है अच्छा लड़का मिले, अच्छी लड़की मिले, मेरी शादी हो जाय ।' नहीं ! आपका उद्देश्य शादी करना नहीं है, आपका उद्देश्य सुख लेना है परंतु इन्द्रिय-सुख में फँसने के लिए यह मनुष्य-जीवन नहीं है ।

एहि तन कर फल बिषय न भाई ।

(रामचरित. उ.कां. : ४३.१)

इन आकर्षणों से निकलते हुए इनका औषधरूप में उपयोग करो और अपने वास्तविक उद्देश्य- सच्चिदानन्द के रस को पाकर मुक्त हो जाओ । यही बहादुरी है ।

साधन धाम मोच्छ कर द्वारा ।

'यह मनुष्य-शरीर साधन का धाम तथा मोक्ष का द्वार है ।' (रामचरित. उ.कां. : ४२.४)

ढेर सारे धन से, सत्ता के बड़े-बड़े पदों से और बड़े-बड़े कर्मों से भी दुःखों का अंत नहीं होता लेकिन 'हमको दुःख-सुख में सम रहना है, हमें भगवद्रस जाग्रत करना है, भगवद्ज्ञान का विचार करना है'- यह वास्तविक उद्देश्य बना लो तो दुःख टिकेंगे नहीं ।

मैं कौन हूँ ? 'सत्स्वरूप चेतन हूँ, आनन्दस्वरूप हूँ' - यह सुना है किंतु अनुभव कब करोगे ? अनुभव करने का उद्देश्य बना लो । इस अनुभव को पाने की तड़प बढ़ा दो । ऊँचा उद्देश्य होगा तो छोटी-छोटी चीजों में आसक्ति नहीं होगी ।

मनुष्य दुःखी कब होता है ? जब छोटे-छोटे उद्देश्यों में, छोटी-छोटी बातों में फँसता है । ईश्वरप्राप्ति का ऊँचा उद्देश्य हो तो कैसी भी उपलब्धि हो, चाहे कैसा भी घाटा हो, वह कुछ भी नहीं है । जिसको चक्रवर्ती राजा बनना है, उसको १०-२० लाख रुपया मिल भी गया तो क्या बात है और चला भी गया तो क्या बात है ? उसका उद्देश्य तो चक्रवर्ती बनना है परंतु चक्रवर्ती बनकर भी व्यक्ति पूर्ण निर्दुःख नहीं होता, इसलिए 'केवल अपने सत्स्वभाव, चेतन स्वभाव, आनन्द स्वभाव को जाग्रत करूँगा'- ऐसा ऊँचा उद्देश्य बना लो ।

भगवन्नाम का जप करो व भगवान की प्रसन्नता के लिए सेवाकार्य करो । जो काम करो, तत्परता से करो । लापरवाही से, बेईमानी से, बेजवाबदारी से कार्य बिगड़ने नहीं देना चाहिए । **समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी और समता के सद्गुण से सम्पन्न होकर कार्य करो ।** बुद्धि में विषमता आयेगी तो योग्यता का नाश होगा । 'यह मेरा बेटा है, यह भाई का है । मेरे बेटे को ज्यादा मिले, भाई के बेटे को कम ।' - यह विषमता है । समतायुक्त व्यवहार होना चाहिए । **समत्वं योग उच्यते ।** (गीता : २.४८) समत्वभाव ही योग कहलाता है । उद्देश्य सुख-दुःख में समता का बना लो, भगवत्प्राप्ति का बना लो ।

उद्देश्य तीन प्रकार के होते हैं । एक होता है कपोल-कल्पित उद्देश्य । एक लड़का मेरे पास आया । बहुत लम्बा-चौड़ा, हृष्ट-पुष्ट था । उसने मुझे प्रणाम किया । मैंने पूछा : ''क्या चाहते हो ?'' उसने कहा : ''महाराज ! मैं जंगल में रहता हूँ ।

मैं चाहता हूँ कि जंगल का बड़े-से-बड़ा पेड़ अपने कंधे पर उठाकर जंगल के बाहर रख आऊँ। जिस दिन ऐसा होगा उस दिन मैं अपना जीवन सफल मानूँगा।'' उसका यह लक्ष्य था। यह संभव तो नहीं है परंतु संभव हो भी गया तो क्या हो जायेगा ? यह है तामसिक लक्ष्य। 'आतंक फैलायेंगे, ऐसा कर देंगे-वैसा कर देंगे...'- यह बिल्कुल तामसिक, कपोल-कल्पित उद्देश्य है।

दूसरा है व्यावहारिक या सामाजिक उद्देश्य। जैसे - पढ़ेंगे-लिखेंगे व डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, जज बनेंगे। यह बहुत छिछरा उद्देश्य है। इससे थोड़ा ऊँचा उद्देश्य होता है कि 'मैं डॉक्टर या कुछ बनकर सेवा करूँगा।' सेवा तो करेगा लेकिन 'इतने मरीज निःशुल्क देखता हूँ, सेवा करता हूँ।'- यह अहं भी पुष्ट होता रहेगा। फिर गाड़ी चाहिए, पत्नी चाहिए, पैसा भी चाहिए। अपनी इज्जत-आबरू भी बना ली पर आखिर क्या ? आयकर की चिंता से नहीं छूटेगा, घर के उपद्रवों से नहीं छूटेगा। बुढ़ापे के प्रभाव से नहीं छूटेगा, मृत्यु के भय से नहीं छूटेगा। परमात्मा को पाने का लक्ष्य नहीं है तो आप कुछ भी बन जायें आपके सब दुःख नहीं मिटेंगे क्योंकि जो बनेगा वह बिगड़ेगा। जिसकी उत्पत्ति हुई है उसका नाश भी होता है। **इन दोनों प्रकार के उद्देश्यों की पूर्ति के बाद भी दुःख, तनाव, चिंता आदि से मुक्ति नहीं मिलती और मरने के बाद क्या गति होगी, पता नहीं।**

तीसरा है वास्तविक उद्देश्य - **'मोक्ष' अर्थात् सब दुःखों की सदा के लिए निवृत्ति और परमानन्दस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति।** हमारा जन्म हुआ है ऐसा सुख पाने के लिए जिससे बढ़कर कोई सुख नहीं। मरने के बाद नहीं, जीते जी !

कोई कहेगा : 'बापूजी ! भगवान को पायेंगे तब पायेंगे लेकिन धन भी प्रापणीय (प्राप्त करने योग्य) है; यश, आरोग्य भी प्रापणीय हैं। ये सारी प्रापणीय चीजें मिलें तब भगवान को पायेंगे। ये थोड़े-थोड़े सुख मिल जायें तब बड़े की ओर जायेंगे।'

अरे ! थोड़े-थोड़े सुख में तो घोड़ा, गधा, कुत्ता भी राजी हो जाता है। आपको भी उन्हींमें राजी होना है तो यहाँ (सत्संग में) आने की जरूरत क्या है ? थोड़ी सुविधा मिल गयी तो कुत्ता पूँछ हिलाने लगता है। मैं नहीं चाहता कि आप ऐसे सुख की लोलुपता में फँसो। आप तो वहाँ पहुँच जाओ जहाँ सुख-दुःख की दाल नहीं गलती।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥

'परमात्मा की प्राप्तिरूप जिस लाभ को प्राप्त होकर योगी उससे अधिक दूसरा कुछ भी लाभ नहीं मानता और परमात्मप्राप्तिरूप जिस अवस्था में स्थित योगी बड़े भारी दुःख से भी चलायमान नहीं होता (उस योग को जानना चाहिए और उसे करना कर्तव्य है)।' **(गीता : ६.२२)**

आपकी साधना में वह ताकत नहीं है कि आपके सब दुःख मिटा दे, आपके धन में, आपकी मन-बुद्धि में वह ताकत नहीं है कि आपके सब दुःख मिटा दे।

सभी मनुष्यों की ताकत मिलकर भी एक मनुष्य का समस्त दुःख नहीं मिटा सकती है क्योंकि वह कभी-न-कभी मरेगा ही और मौत से तो हम बचा नहीं सकते। मरने के बाद उसका सूक्ष्म शरीर किसी माँ के गर्भ में जायेगा। गर्भ में सुख मिलेगा कि दुःख मिलेगा ? और गर्भ नहीं मिलेगा तो भी दुःख ! किंतु उसने अगर लक्ष्य ऊँचा बना लिया तो फिर दूसरी बार गर्भवास होगा ही नहीं, वह सच्चिदानन्द की स्मृति करके सच्चिदानन्द में मिल जायेगा। फिर कौन डालेगा उसे गर्भ में ?

(शेष पृष्ठ १६ पर)

अद्वेष्टा सर्वभूतानां...

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

परम सुख पाना हो, परम तत्त्व को पाना हो, ब्रह्मज्ञान को पाना हो तो भक्त को कैसा बनना चाहिए ?

भक्त की पहचान क्या है ? जो परमात्मा से, अकाल पुरुष से अपनेको विभक्त नहीं मानता-जानता वह उत्तम भक्त है । ऐसा उत्तम भक्त, परम भक्त कैसा होता है ?

भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है :

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी ।।

'जो पुरुष सब भूतों में द्वेषभाव से रहित, स्वार्थरहित, सबका प्रेमी और हेतुरहित दयालु है तथा ममता से रहित, अहंकार से रहित, सुख-दुःखों की प्राप्ति में सम और क्षमावान है अर्थात् अपराध करनेवाले को भी अभय देनेवाला है - (वह मेरा भक्त मुझको प्रिय है) ।' **(गीता : १२.१३)**

भगवान कहते हैं : **'अद्वेष्टा'** प्राणिमात्र के प्रति उसके चित्त में द्वेष का अभाव होता है अर्थात् अपने लिए दुःख देनेवाले से भी द्वेष नहीं करता, समस्त भूतों को आत्मरूप से ही देखता है ।

मन से द्वेष बिल्कुल हट गया तो वह मनुष्य उत्तम भक्त बनता है । द्वेष छोड़ना यह उत्तम भक्त का प्रथम लक्षण है । **'मैत्रः'** वह सबके साथ मित्रभाव से बर्ताव करता है । मित्र जैसा हित करता है, वैसा ही 'किसका हित किसमें है' यह जानकर वह प्राणिमात्र का हित करता है ।

'करुणः' उसके हृदय में करुणा होती है । दीन-दुःखियों के प्रति दया से युक्त होता है अर्थात् समस्त प्राणियों को अभय देनेवाला होता है ।

'निर्ममः' वह ममतारहित होता है । 'ममता' द्वेष का हेतु है इसलिए वह ममतारूपी दुर्गुण से अपनेको बचाता है । 'यह मेरा है, यह दूसरे का है, यह मेरा नहीं है' - इस प्रकार का विचार ममत्व या द्वेष से प्रेरित कहलाता है ।

'निरहंकारः' अहंकारशून्य अर्थात् आचरण, स्वाध्याय आदि से जनित अहंकार से रहित होता है ।

'समदुःखसुखः' उसके लिए सुख और दुःख समान हैं, वह सुख हो अथवा दुःख हो अपने कर्तव्य से कभी परावृत्त नहीं होता । वह सुख-दुःख की प्राप्ति में हर्ष और उद्वेग से रहित होता है ।

'क्षमी' वह क्षमावान है अर्थात् किसीके द्वारा डाँटने, मारने पर भी जो विकाररहित, क्रोधरहित ही रहता है ।

इस प्रकार जो सब प्राणियों में द्वेषभाव से रहित, सबका प्रेमी, दयालु, ममता एवं अहंकार से रहित, सुख-दुःख की प्राप्ति में सम और क्षमाशील है, जिसका चित्त निरंतर उस परमात्म-प्रसाद में विराजता है, जो परमात्मा से विभक्त नहीं होता, ऐसा जो अपनेको ईश्वर से, ईश्वर को अपनेसे अलग नहीं समझता वही उत्तम भक्त है । गुरुवाणी में आता है :

तैसा अंम्रितु तैसी बिखु खाटी ।
तैसा मानु तैसा अभिमानु ।
हरख सोग जा कै नही बैरी मीत समान ।
कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जान ।।

प्राणिमात्र के प्रति द्वेषरहित हों, श्रेष्ठ पुरुषों से मैत्री तथा छोटों के प्रति **(शेष पृष्ठ १४ पर)**

सबका पालनहार है वह

- परम पूज्य बापूजी

कोई परिवार २-३ वर्ष का एक नन्हा बालक साधु को अर्पण करके चला गया। बालक साधु के पास रहने लगा। एक वृद्धा माता स्वयं भिक्षा दे जाती थी, उसीसे गुजारा होता था। समय बीता, बालक बड़ा हुआ। उस लड़के को बाहरी ज्ञान बिल्कुल नहीं था। जब वह १८-२० साल का हुआ तब बूढ़े साधु चल बसे। अब वह अकेला ही रहने लगा।

एक बार भिक्षा लेकर आनेवाली वृद्धा बीमार पड़ी। उसने अपनी पोती से कहा : ''बेटी ! आज मैं चल नहीं सकती, तू जा उस साधु को यह भोजन दे आ।''

उस युवान साधु ने वृद्धा माता व सँभालनेवाले साधु को छोड़कर अन्य किसीको देखा नहीं था। उसे दुनियादारी की बिल्कुल खबर नहीं थी। वह युवती आयी तो उसने पूछा : ''तुम कौन हो ?''

युवती ने कहा : ''मैं उन वृद्धा माता की पोती हूँ जो प्रतिदिन आपको भिक्षा पहुँचाती हैं।''

उस युवान साधु ने बिल्कुल निर्दोष भाव से स्तनों की ओर इशारा करके पूछा : ''ये क्या हैं ?''

लड़की शरमा गयी। उसके निर्दोष भाव को जानकर लड़की ने कहा : ''ये दूधे हैं।''

''दूधे क्या होते हैं ?''

''जब बच्चा आता है तो उसके लिए इनसे दूध निकलता है।''

''तुम्हारा बच्चा भी है ?''

''नहीं ! बच्चा तो नहीं है। मेरी मँगनी हो गयी है। शादी के बाद बच्चा आयेगा तब इनमें से दूध निकलेगा।''

साधु सोचने लगा, 'बच्चा माँ के गर्भ में आये उसके पहले ही आहार की व्यवस्था हुई ! शादी के बाद जो बच्चा आयेगा उसके लिए अभी से दूध देनेवाले अंग निकल आये ! फिर यह रोटी दे जाय तभी मैं यहाँ रहूँ ? नहीं...'

''वापस ले जा, मुझे नहीं चाहिए भिक्षा। बच्चे के आने से पहले ही परमात्मा ने उसके खाने की व्यवस्था कर दी। मैं उसके लिए चल पड़ूँ तो वह मेरे लिए भी तो कुछ करेगा।''

साधु चल दिया ईश्वर की खोज में।

मुझे किसीने बताया कि 'दिल्ली में नगर निगमवाले एक गर्भवती कुतिया को पकड़कर ले जा रहे थे। डर के मारे कुतिया की तबीयत बिगड़ गयी, उसका बच्चा गिर गया। अब वह छुपी-छुपी नाली में रहती है। मैं रोज उसके लिए खाना ले जाता हूँ। वह खाती है, फिर नाली में छुप जाती है। उसे कुछ तकलीफ हुई तो मैं उसे चिकित्सक के पास ले गया। चिकित्सक ने जाँच की, फिर उसके लिए उपयुक्त आहार बनाने को कहा। मैं उसके लिए प्रतिदिन वैसा ही आहार ले जाने लगा।'

उस कुतिया ने न तो किसीसे भोजन माँगा और न ही चिकित्सक को बुलाया। जो व्यक्ति उसे खिलाने जाते हैं, वे प्राणिमात्र में परमेश्वर को माननेवाले श्री राजेश मित्तल, ग्रीनपार्क मेन, नई दिल्ली -१६ में इसी प्रकार के सेवाकार्यों में लगे हैं। वे पशुओं की सेवा करते हैं। दिल्ली आश्रम में दर्शन आदि के लिए आते हैं।

जब उस कुतिया को प्रारब्ध से गुजर-बसर करने के लिए मिल जाता है तो फिर जो प्रतिदिन

जप-ध्यान करता है ? वह चिंता क्यों करे ?

जो भगवान के रास्ते चलते हैं और सोचते हैं कि 'मेरा भविष्य में क्या होगा ?' वे घोर नास्तिक हैं। वे बड़े भारी-से-भारी तीन पाप करते हैं। वे भगवान का अपमान करते हैं, अपने भजन का भी अपमान करते हैं और अपने भाग्य का भी अपमान करते हैं।

मुर्दे को प्रभु देत है कपड़ा लकड़ा आग।
जिंदा नर चिंता करे ताके बड़े अभाग ॥

'भविष्य में मेरा क्या होगा ?'- ऐसा जो सोचते हैं उनका बड़ा दुर्भाग्य है। आजकल के पढ़े-लिखे लोग अपनेको बुद्धिमान मानते हैं लेकिन अनपढ़ लोगों से भी गये-बीते हैं। अनपढ़ लोग जितने निश्चिंत हैं, जितनी ईमानदारी से ईश्वर के भरोसे मस्ती से रहते हैं उतना पढ़े-लिखे नहीं रह रहे हैं। पढ़े-लिखों का बुरा हाल है। माँ के गर्भ में थे तो 'भविष्य का क्या होगा ?'- सोच के, उसकी व्यवस्था करके फिर जन्म लिया है क्या ? माँ के शरीर में बैठकर 'संसार में आयेंगे तो आगे क्या होगा ?' ऐसा भविष्य के लिए सोच के आये थे कि ईश्वर के भरोसे आये ?- इतना ही सवाल काफी है भविष्य की चिंता करनेवालों की आँखें खोलने के लिए। भविष्य की चिंता में पच मरनेवाले इसे बार-बार पढ़ें-विचारें तथा भय और चिंता से बचने की कृपा करें। करोगे न कृपा ?

तुलसी भरोसे राम के, निश्चिंत होई सोय।
अनहोनी होनी नहीं, होनी होय सो होय ॥ ☐

(पृष्ठ १२ का शेष) करुणा से युक्त हों और ममतारहित हों। ममता बड़ी दुःखदायी है, अतः शरीर और शरीर के संबंधों में, वस्तुओं में ममता न रखें। निरहंकारी बनें, सुख-दुःख में समता बनाये रखें और क्षमावान बनें तो परमात्मा को पाना आपके लिए सहज हो जायेगा। परमात्मा का दीदार करना सरल हो जायेगा। ☐

जीवनोपयोगी बातें

✻ वास्तुशास्त्र के नियमों के उचित पालन से शरीर की जैव-रासायनिक क्रिया संतुलित रखने में सहायता मिलती है।

✻ घर या वास्तु के मुख्य दरवाजे में देहरी (दहलीज) लगाने से अनेक अनिष्ट शक्तियाँ प्रवेश नहीं कर पातीं व दूर रहती हैं। प्रतिदिन सुबह मुख्य द्वार के सामने हल्दी, कुमकुम व गोमूत्र मिश्रित गोबर से स्वस्तिक, कलश आदि आकारों में रंगोली बनाकर देहरी (दहलीज) एवं रंगोली की पूजा कर परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि 'हे ईश्वर ! मेरे घर व स्वास्थ्य की अनिष्ट शक्तियों से रक्षा करें।'

प्रवेशद्वार के ऊपर आम, अशोक आदि के पत्ते का तोरण (बंदनवार) बाँधना मंगलकारी है।

✻ जिस घर, इमारत आदि के मध्यभाग (ब्रह्मस्थान) में कुआँ या गड्ढा रहता है, वहाँ रहनेवालों की प्रगति में रुकावट आती है एवं अनेक प्रकार के दुःख एवं कष्टों का सामना करना पड़ता है। अंत में कुटुम्ब का नाश ही होता है।

✻ शौचकूप (सेप्टिक टैंक) उत्तर दिशा के मध्यभाग में बनाना सर्वोचित रहता है। यदि वहाँ संभव न हो तो पूर्व के मध्य में बना सकते हैं परंतु वास्तु के नैर्ऋत्य, ईशान, दक्षिण, ब्रह्मस्थान एवं अग्नि भाग में सेप्टिक टैंक बिल्कुल नहीं बनाना चाहिए। ☐

ये कुर्वन्ति उपवासांश्च विधानेन शुभान्विताः।
न यान्ति ते मुनिश्रेष्ठ नरकान् भीमदारुणान् ॥

'जो कल्याणकामी विधिपूर्वक व्रतोपवासों का परिपालन करते हैं, वे दारुण तथा भयंकर नरकों में नहीं जाते।'

(पद्म पुराण)

बोझरहित जीवन जीयो

(पूज्य बापूजी के सत्संग से)

लोग जल्दी से उन्नति क्यों नहीं करते ? क्योंकि बाहर के अभिप्राय एवं विचारधाराओं का बहुत बड़ा बोझ हिमालय की तरह उनकी पीठ पर लदा रहता है ।

जब तुम सुबह घूमने जाते हो तब कोई तुमको पूछे : 'कहाँ जा रहे हो ? दफ्तर जा रहे हो या दुकान ?' तो जवाब आता है : 'नहीं भाई ! मैं घूमने जा रहा हूँ ।' उस समय तुम्हारी बातों में कितनी ताजगी होती है ! चेहरे पर कितनी रौनक होती है !

फिर दस-ग्यारह बजे जब उसी रास्ते से गुजरते हो तब कोई पूछे : 'घूमने जा रहे हो ?' तो जवाब आता है : 'दुकान पर जा रहा हूँ ।' या 'दफ्तर जा रहा हूँ ।' तब तुम्हारा चेहरा कुछ और ही ढंग का होता है । पहले की ताजगी-रौनक गायब हो चुकी होती है । क्यों ? क्योंकि कल्पनाओं ने घेर लिया है । 'यह करना है, वह करना है...'- कर्तृत्वभाव का बोझ लेकर जा रहे हो । ऐसे नहीं... जीवन भर की दिनचर्या ऐसी बनाओ, दुकान-धंधा ऐसे करो जैसे राजकुमार कोई खेल खेलता है - विनोदमात्र ! विनोदमात्र व्यवहार जैसा ।

कोई सोचे : 'विनोदमात्र व्यवहार करूँ तो धंधे में गिरावट आयेगी !' ना-ना... बोझ और चिंता हटाकर व्यवहार करो तो बहुत अच्छा काम होगा । चिंता किसलिए ? आज तक जो गुजर गया उसे देख लिया, जो गुजर रहा है वह देख रहे है और जो गुजरेगा वह देखा जायेगा । बहुत होगा तो मर जायेंगे । एक दिन तो मरना ही है । मौत से डरो नहीं, मौत से बचने की कोशिश मत करो, उससे भागो मत । मुसीबतों को आमंत्रित करो कि देखूँ, जरा कैसी होती हैं ? तब मुसीबत में दम नहीं रहेगा । हमारे पास मुसीबत आती है तो मुसीबत को मुसीबत हो जाती है कि मैं गलत जगह पर आ गयी ।

कइयों को डर रहता है : 'ऐसा न हो जाय, बेइज्जती न हो जाय...।' बेइज्जती के भय से तो बेइज्जती हो जाय अच्छा है । मृत्यु के भय से तो मृत्यु अच्छी । अपमान के भय से अपमान अच्छा । भय खतरनाक होता है । भय तुम्हारी कल्पनाओं को और बढ़ा देता है तथा शक्ति को क्षीण कर देता है । निर्भय, निश्चिन्त और बोझरहित जीवन जीयो ।

बूढ़े कवि मिल्टन सुबह लकड़ी टेकते हुए सैर करने जाते तो पत्नी डाँटती : ''रोज-रोज सैर करने जाते हो, वहाँ क्या रखा है ? आँखों से तो दिखता नहीं ।''

मिल्टन : ''पंछी गीत गाते हैं, हवाएँ अठखेलियाँ करती हैं । प्रातः की ताजी-ताजी हवा में रात के घनघोर अँधेरे को चीरता हुआ प्रभात जब प्रकट होता है तो अद्‌भुत सौंदर्य ले आता है । मैं वह सौंदर्य देखने जाता हूँ ।''

पत्नी : ''सौंदर्य देखने के लिए तो आँखें नहीं हैं तुम्हारे पास !''

मिल्टन : ''यह सौंदर्य बाहर की आँखों से नहीं दिखता है । उसे देखने की आँखें भीतर होती हैं ।''

ऐसे ही जीवन को देखने के लिए बाहर की

आँखों की जरूरत नहीं है, उसके लिए भीतर की आँख चाहिए । हम कितने शांत हैं, कितने प्रसन्न हैं, प्रतिकूलता के समय हमारे चित्त की स्थिति क्या है - यह देखने के लिए बाहर की आँख नहीं चाहिए । दुःख के समय, अपमान के समय हम भीतर से कितने निश्चिन्त हैं- यह देखने के लिए भी हमें बाहर की आँख नहीं चाहिए। मान मिलते समय हम भीतर से उसके कितने गुलाम हो जाते हैं अथवा मान से कितने निर्लिप्त रहते हैं- यह देखने के लिए भीतर की आँख चाहिए । जीवन को निश्चिन्त, निर्भय एवं रसमय बनाने के लिए आवश्यक यह अंतर्दृष्टि आत्मा में जागे हुए महापुरुषों के सत्संग-सान्निध्य से प्राप्त होती है और साक्षीभाव के अभ्यास से पूर्णता को प्राप्त होती है । इसलिए कर्ता-भोक्ता भाव का बोझ ढोने के बजाय महापुरुषों की शरण में जाकर द्रष्टा, नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वरूप को समझना चाहिए। ❒

(पृष्ठ ११ का शेष) अज्ञान से ही तो गर्भवास है ।

मात्र उद्देश्य ऊँचा बनाने से आपकी ९० प्रतिशत साधना पूरी हो जाती है। फिर ८ प्रतिशत आपकी दृढ़ श्रद्धा और २ प्रतिशत आपकी मेहनत, बस ! उद्देश्य ईश्वर नहीं है तो आपकी १०० प्रतिशत मेहनत होने पर भी देर-सवेर मर जाने पर परिणाम शून्य में बदल जायेगा ।

लक्ष्य न ओझल होने पाये, कदम मिलाकर चल ।
सफलता तेरे चरण चूमेगी, आज नहीं तो कल ॥

आपके अंदर बुराई है तों अपनेको कोसो मत, अपने अंदर अच्छे उद्देश्यों को भरो । इससे मन की हलकी वृत्तियाँ, हलका आकर्षण, हलका चिंतन निकल जायेगा और वास्तविक उद्देश्य की ओर यात्रा होने लगेगी । ❒

सत्कर्तव्य-पालन से समय को सार्थक बनाओ

- पूज्य बापूजी

२४ घंटों में जितना अच्छा कर लिया, जितना अच्छा जान लिया वह अपनी कमाई हो गयी, नहीं तो समय बरबाद हुआ । पैसा गया तो कुछ नहीं गया, समय गया तो सब कुछ गया। पैसा मिला तो कुछ नहीं मिला, तंदुरुस्ती मिली तो कुछ-कुछ मिला लेकिन सत्संग मिला और समय की महत्ता को समझ के समय के दाता के रहस्य को समझ गये, उस समय के दाता का ज्ञान पा लिया तो सब कुछ मिल गया। समय का सदुपयोग करो। सदुपयोग का मार्गदर्शन तो सत्संग से ही मिलता है।

सुबह उठकर संकल्प करो : 'आज का दिन मैं समय का सदुपयोग करूँगा, खेलने के समय मन लगाकर खेलूँगा, पढ़ने के समय मन लगाकर पढ़ूँगा, काम करने के समय दिल लगाकर काम करूँगा और दिल लगाकर दाता का सुमिरन व ध्यान करूँगा ।'

जो दिल लगाकर काम करता है उसका राम में भी दिल लगता है। जो लापरवाही से काम करता है उसका फिर ध्यान-भजन भी ऐसे ही होता है।

एक सत्शिष्य कार में बैठकर जा रहे थे।

रास्ते में किसी लड़के की किसी वाहन से टक्कर हुई और वह खड्डे में जा गिरा। खून बह रहा था। सत्शिष्य ने गाड़ी रोकी, लड़के को उठाया। तब तक तो इधर-उधर देखनेवाले लोग देख रहे थे। उस सत्शिष्य, ऊँचे पदवाले सत्संगी को लोगों ने पहचाना तो जय-जयकार करने लगे। वे जरा गुस्से में आ गये कि ''क्या बकवास है... बच्चे का खून बह रहा है, उसको तो कोई उठाता नहीं है, उसकी कोई मलहम-पट्टी नहीं करता और मेरी अंधी खुशामद कर रहे हैं। इस खुशामदखोरी से तो अपना कर्तव्य पालना, समय का सदुपयोग करना हजारों गुना अच्छा है।''

एक सेठ था। उसने अपने दो प्रबंधकों को चिट्ठियाँ लिखीं कि तुम लापरवाह हो गये हो। काम पर ऐसे-ऐसे ध्यान दो, कारखाने पर ध्यान दो, ऐसा-ऐसा करो। जो कुछ आदेश था वह लिखा और नीचे आदेश लिखा कि इस चिट्ठी का आदर किया जाय वरना तुम्हें निकाल दिया जायेगा।

दोनों प्रबंधकों को चिट्ठियाँ मिलीं। एक ने सारे कर्मचारी-वर्ग को बुलाकर कहा कि काम में जरा तत्परता लायें और बाहर जाकर काम करनेवाले फुटकर विक्रेताओं को भी उत्साहित किया तथा उत्पादन सही, सुंदर व अधिक हो इसमें तत्परता से लग गया।

दूसरे प्रबंधक ने क्या किया ? उसने सोचा कि सेठ ने चिट्ठी में लिखा है कि चिट्ठी का आदर होना चाहिए। तो उसने चिट्ठी को रूमाल में रखा, उसकी आरती की और रोज उस चिट्ठी के आगे उसके सारे मुनीम तथा नौकर नमस्कार करने लगे।

कुछ समय बाद जब सेठ कारखानों का निरीक्षण करने गया तो जिस कारखाने में सब तत्परता से काम में लगे थे उन पर तो वह खुश हुआ और जो सेठ की चिट्ठी की रोज आरती करते थे, पूजा करते थे, चिट्ठी के आगे सिजदा करते थे उन पर वह राजी हो जायेगा क्या ? नहीं। ऐसे ही भगवान तो हैं सेठों के सेठ और भगवान के शास्त्र हैं भगवान का संदेश। उनके शास्त्रों को, पुराणों को हाथ जोड़ते रहें लेकिन उनमें जो लिखा है उस पर अमल करें नहीं, भगवान जो आचरण करने को कहते हैं वह तो करें नहीं, उलटा करें तो ऐसे लोगों पर भगवान प्रसन्न होंगे क्या ? भगवान बोलते हैं सत्य बोलो हम असत्य बोलें, भगवान कहते हैं परहित करो और हम शोषण करें, भगवान कहते हैं मेरे लिए सत्कर्म करो और हम अहंकार, वासना, विकार के लिए करें। वे मुनीम-नौकर तो चिट्ठी के अनुसार नहीं करते थे लेकिन हम तो शास्त्र के विपरीत करने में लगे हैं। हाय ! वासना-विकार ! हाय ! मनमुखता ! अब हमारा पिंड छोड़ो। ❑

बात की मार

डॉ. राजेंद्र प्रसाद एक बार रेलगाड़ी में यात्रा कर रहे थे। उनके सामनेवाली सीट पर बैठा एक युवक बीड़ी पीकर धुआँ उड़ा रहा था। इससे राजेंद्र बाबू को खाँसी आने लगी। वे परेशान हो गये। उन्होंने युवक से पूछा : ''क्यों भाई ! बीड़ी तुम्हारी ही है न ?''

युवक रोब से बोला : ''क्या तुम्हारी है ?''

इस पर राजेंद्र बाबू ने समझाते हुए शांत लहजे में कहा : ''अरे भाई ! जब बीड़ी तुम्हारी है तो धुआँ भी तो तुम्हारा ही हुआ न ? तुम धुआँ भी अपने पास रखो, दूसरों पर क्यों फेंक रहे हो ?''

राजेंद्र बाबू की बात सुनकर युवक लज्जित हो गया। उसने तुरंत बीड़ी बुझा दी। बीड़ी-सिगरेट पीनेवाले और गपशप करनेवाले सावधान ! ❑

अपने-आपमें बैठो

- पूज्य बापूजी

मनुष्य-जन्म कीमती है, उसके एक-एक क्षण का सदुपयोग करो । आप किसी अच्छी जगह बैठेंगे, अच्छी जगह सोचेंगे तो अच्छा करेंगे और समय का सदुपयोग होगा । अच्छी जगह कौन-सी है ? अच्छे-में-अच्छी जगह वह है जहाँ परमात्मा बसता है । जहाँ परमात्मा हो उससे बढ़कर कोई अच्छी जगह नहीं है ।

परमात्मा कहाँ रहता है ? परमात्मा सामान्य रूप से तो सब जगह रहता है लेकिन विशेषरूप से प्रकट होता है हृदय में ।

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।

(गीता : १८.६१)

भगवान हृदय में रहता है । आप भी हृदय में रहो क्योंकि यह विशेष अनुभव की जगह है । सुख, दुःख, लाभ-हानि के जो भी प्रसंग होते हैं, घटनाएँ तो बाहर घटती हैं किंतु अनुभव हृदय में होता है । जैसे स्पर्श-इन्द्रिय तो सारे शरीर में है परंतु शरीर पर मिठाई रखो तो मीठी नहीं लगेगी, नमकीन रखो तो उसका स्वाद नहीं आयेगा लेकिन जिह्वा पर रखो तो तुरंत पता चलेगा कि मीठी है या खारी है । ऐसे ही आप अगर हृदय में रहते हैं तो आपको पता चल जायेगा कि यह विषयों का सुख है, कल्पनाओं का सुख है, कामनाओं का सुख है, भावनाओं का सुख है या भगवान का सुख है ?

अगर आप हृदय में रहना सीखेंगे तो किसी भी घटना के घटने पर तुरंत पता चलेगा कि अब हृदय में क्या हुआ ? फलाने ने दुःखद समाचार सुनाया लेकिन अब क्या हुआ ? दुःख आ गया कोई हरकत नहीं किंतु दुःख को देखने की अटकल आ गयी तो आप उससे अलग हो गये । विषय का सुख आ गया कोई हरकत नहीं लेकिन विषय के सुख को देखने की अटकल आ गयी तो आप उससे पृथक् हो गये । जो आदमी इनसे पृथक् होकर देखता है वह इनका उपयोग ठीक-से कर सकता है ।

संसार से भी पृथक् होकर रहना है । संसार से पृथक् होकर कहाँ रहेंगे, कहाँ जायेंगे ? जहाँ भी जाओ, शरीर है तो वहाँ संसार होगा ही, पृथ्वी होगी, सूर्य की किरणें होंगी, पानी लेना पड़ेगा । घर छोड़ के झोंपड़ा, झोंपड़ा छोड़ के और कोई गुफा... पवित्र देश में मन पवित्र होता है, एकान्त देश में भगवत्प्राप्ति में सुविधा होती है यह बात सही है परंतु एकान्त का बाहरी अर्थ लेकर संसार से पृथक् नहीं हुआ जा सकता । **एक तो बाह्य एकान्त होता है, दूसरा सब विचारों का एक में ही अंत कर दें - हृदय में, साक्षी स्वरूप में - वह बढ़िया एकान्त है**, वह परम एकान्त है । एक में ही सब विचारों का अंत- आँख अनेक रूप देखती है पर देखनेवाला मैं एक । कान अनेक शब्द सुनते हैं, मैं सुननेवाला एक । नाक अनेक प्रकार की गंध लेती है, गंध का द्रष्टा मैं एक । बिल्कुल सही, सीधी, साफ बात है; शास्त्र की, वेदांत की बात है, महापुरुषों का अनुभव है । आप भी युक्ति (विचार) से देखो तो सिद्ध है । अच्छी गंध आयी, मन को अच्छा लगा तब भी आप थे, मध्यम गंध आयी मन को मध्यम लगा तब भी आप थे और एकदम दुर्गन्ध आयी तो मन को खिन्नता हुई, तब भी आप थे । यह तो सीधी बात है । वेदांत जैसा और कोई सरल ज्ञान

नहीं है लेकिन हमें उलटे ज्ञान का अभ्यास ऐसा पड़ गया कि सुलटा कठिन लग रहा है और उलटा सरल हो रहा है।

जैसे चरवाहे के लड़के के लिए पचीस भैंस चराना सुगम है किंतु पचीस का आँकड़ा लिखना कठिन है क्योंकि भैंस चराने की आदत पड़ गयी। आप बैठे-बैठे दो सेकंड में २५ तो क्या २५,००० लिख सकते हो लेकिन ऐसा सरल आँकड़ा लिखना उस लड़के के लिए कठिन है। ऐसे ही आत्मा-परमात्मा को जानकर उसमें एकाकार हो जाना बड़ा सरल है; कोई पशु चराने नहीं हैं या कोई बोझ उठाना नहीं है। यह कठिन लग रहा है लेकिन इसको जान लिया तो बस, ३३ करोड़ देवता तो भोगों के पीछे लगे हैं, आप भोगों से पृथक् होकर भोगों के साक्षी, भोगों के बाप बन जाओगे; भोगों के स्वामी, दुःख के स्वामी, सुख के स्वामी ! दुःख और सुख का जो स्वामी बनेगा उसको दुःख-सुख क्या कर सकेगा ?

लालिया और कालिया, दो कुत्ते मैंने पाले हैं। मैंने अपने बँगले पर लिख दिया है : 'सावधान ! कुत्ते काटते हैं।' नया व्यक्ति आयेगा तो थरथर काँपेगा लेकिन मुझे उन कुत्तों से डर होगा क्या ? चाहे वे मेरे पीछे-पीछे आते हों, मेरे पैरों को चाटते हों तब भी मुझे भय नहीं होगा। कभी वे सोये हैं और मैं उनको छेड़ देता हूँ, धक्का दे देता हूँ, थप्पड़ भी मार देता हूँ तो क्या मुझे काट लेंगे ? नहीं। क्योंकि मेरे पाले हुए कुत्ते हैं। मेरे अधीन हैं। मैं उनका स्वामी हूँ। ऐसे ही लालिया तो है सुख और कालिया है दुःख। आप उनसे मिल नहीं जाओ, उनको अपने अधिकार में रखो। उनके स्वामी बन जाओ। फिर उनको कभी छेड़ भी दोगे तो उनकी हिम्मत नहीं कि आपको काटें। कभी जीवन में सुख को छेड़ दोगे तो सुख कि हिम्मत नहीं कि आपको आसक्ति में डाल दे। कभी जीवन में जानबूझकर दुःख को भी छेड दोगे... बापूजी ! दुःख को छेड़ देंगे ? हाँ। ज्ञानवान तो कई बार ऐसा कुछ करते हैं कि कोई दुःख आ जाय। अपन लोग तो दुःख से भागते हैं पर ज्ञानी तो जानबूझ के दुःखों की गलियों में घूमते हैं कि आ जाय जरा... बहुत दिन हो गये। सब 'वाह-वाह, जय-जय, गुरुजी !, भगवान !, प्रभुजी !' तो कर रहे हैं लेकिन चलो, ऐसी जगह जायें जहाँ लोग अपमानित करें, देखें जरा...। मीठा खाते-खाते उबान होती है तो क्या तीखा नहीं खाते ? हम लोग तो अपमान से डरते हैं किंतु संत साधनकाल में जानबूझकर ऐसी जगह पर जाते हैं।

संत उड़िया बाबाजी के शिष्य थे स्वामी अखण्डानंदजी। उनके पास गाड़ी की टिकट तो थी प्रथम श्रेणी की लेकिन जानबूझ के तृतीय श्रेणी में जाकर बैठे। सोचा, वहाँ धक्का-मुक्की होगी, मान-अपमान होगा। देखें, अपमान के समय दुःख होता है कि नहीं। तृतीय श्रेणी में यात्रा करते-करते बहुत कुछ शाब्दिक प्रसाद उनको मिला। आकर गुरुजी को कहा कि ''मैं जानता हूँ कि मैं आत्मा हूँ, ब्रह्म हूँ, अजन्मा हूँ, साक्षी हूँ, चैतन्य हूँ लेकिन दुःख के समय दुःख क्यों होता है ?''

गुरुजी ने कहा : ''कचरे के ढेर पर कोई बैठे और फिर बोले कि 'मुझ पर लोग कचरा क्यों डालते हैं ? मेरे इर्द-गिर्द मक्खियाँ क्यों भिनभिनाती हैं ?' तो तुम बैठे ही ऐसी जगह पर हो। तुम्हारा जब अपमान हुआ था तो तुम अपनेमें नहीं बैठे थे, मन और शरीर के साथ जुड़ गये थे इसीलिए अपमान के समय दुःख हुआ। जब गाड़ी में बैठे थे उस वक्त अपमान हुआ तो तुम समझ रहे थे कि मेरा अपमान हो रहा है। लोगों को तुम थोड़े ही दिख रहे थे, यह देह दिख रही थी। उन्होंने अपमान किया तो शरीर का किया और

तुम समझ बैठे मेरा हुआ क्योंकि तुम मन से परे होकर हृदय में नहीं बैठे, तुम शरीर में बैठे थे।''

देखना, यह जरा-सी बात है परंतु इसे नहीं जाना तो आप भले हजार वर्ष की समाधि लगा लो और ५ साल के बच्चे-से लगो, फिर भी कोई विशेष मंजिल तय नहीं हुई। अगर आप शरीर और मन में बैठे हो एवं लालिया तथा कालिया से डरते रहते हो तो आप मालिक नहीं हो, घर के स्वामी नहीं हो। लोगों की नजर से चाहे आप संन्यासी हो जाओ, चाहे तपस्वी दिखो, चाहे योगेश्वर दिखो, चाहे परमेश्वर दिखो लेकिन अगर शरीर में बैठे हो तो भैया !

तन धारी कोई न सुखिया देखा, जो देखा सो दुखिया रे।

इस शरीर को 'मैं' मानकर अगर आप जीये तो लाखों जन्मों में करोड़ों उपाय करते आये तथा अभी और करते चले जाओगे तो भी दुःखों से जान नहीं छूटेगी।

कभी न छूटे पिण्ड दुःखों से जिसे ब्रह्म का ज्ञान नहीं।

और ब्रह्मज्ञान पाना है बड़ा आसान ! कठिन नहीं है। १० या २५ का आँकड़ा लिखना कठिन है क्या ? चरवाहे का मूर्ख लड़का जरा दिलचस्पी ले तो उसके लिए कठिन नहीं है। ऐसे ही हम थोड़ी-सी दिलचस्पी लें, थोड़ा-सा उत्साह दिखायें। वह चाहे अभी करो, एक महीने के बाद करो, एक साल के बाद करो, एक जन्म के बाद करो, एक युग के बाद करो, करोड़ों युगों के बाद करो लेकिन वह काम आपको करना पड़ेगा। दूसरा कोई उपाय नहीं है दुःखों से छूटने का।

इधर का जो इकट्ठा किया होगा, एक दिन मौत का झटका लगेगा तो सब सफा ! छोकरा कहने में चलता है, पत्नी आज्ञाकारी है, घर बैठे ब्याज आता है, निवृत्ति-वेतन (पेंशन) आता है, मजा है। यह मजा मजा नहीं है, कहने भर को मजा है, आभासमात्र का मजा है। जिसके सिर पर मौत खड़ी है उसको मजा है ? ये सुविधाएँ हैं शरीर की और शरीर आपका है नहीं, एक जैसा रहेगा नहीं। उनको पाकर अगर आप अपनेको सुखी मानते हो तो यह आपकी मान्यता भर है, केवल भ्रम है। अपनेको सुखी मानना भी भ्रम है और दुःखी मानना भी भ्रम है। यह बात बहुत सरल है और बहुत कीमती भी। जो चीज जितनी कीमती होती है वह उतनी ही सहज में उपलब्ध होती है। जीवन के लिए पानी बहुत कीमती है तो एकदम निःशुल्क ! जल से ज्यादा आवश्यकता है तेज की तो तेज जल से १० गुना है। जीवन में तेज से भी ज्यादा, अत्यधिक जरूरत है वायु की, श्वास की। तेज से वायु ज्यादा है। ये सब होते हुए भी शरीर को चलानेवाला चैतन्य न हो तो सब किस काम का ? इसलिए इन सबसे ज्यादा आवश्यकता है परमात्मा की और परमात्मा अनंत गुना है। उसका कोई हिसाब ही नहीं है। तो जो अनंत-अनंत है, उसे पाने में कठिनाई क्या ?

जरा-सा दुःख आया घबरा गये, जरा-सा सुख आया उसके पीछे भागते फिरे... नहीं, उन सबको आने दो, पसार होने दो। उनके साथ चिपको मत। हम लोग चिपक जाते हैं इसीलिए अत्यन्त सुलभ जो परमात्म-शांति है वह महाकठिन हो गयी। जो अत्यन्त सार है वह हमसे छूट गया और जो निस्सार है उसके पीछे हम लोग जीवन भर झख मारकर मर जाते हैं। संसार निस्सार है। कितना भी कुछ करो, कितना भी पाओ, आखिर देखो तो कुछ नहीं। जैसे फिल्म के परदे पर से चित्र गुजरते जाते हैं, ऐसे ही सब घटनाएँ बीतती जा रही हैं। जो देखते-देखते स्वप्न हो रहा है उसको स्वप्न समझने में कठिनता क्या है ? अपने स्थान पर, आत्मभाव में बैठे-बैठे आप आनेवाले सुख को भी देखो और दुःख को भी। वे तो जा ही रहे हैं, आप सिर्फ अपने स्वरूप में निश्चिंत रहो, फिर देखो सब कैसे ठीक चलता है ! ॐ ॐ ॐ... नारायण... नारायण... नारायण... ❑

उमा राम सुभाउ जेहिं जाना...

(पूज्य बापूजी के सत्संग से)

शरीर, संसार, रोग, आरोग्य व सुख-दुःख आदि दृश्य हैं, अनित्य हैं और इन्हें जाननेवाला आत्मा द्रष्टा है, नित्य है । यह ज्ञान सुनना, समझना और इसका चिंतन करना बहुत ऊँची साधना है, ज्ञानयुक्त तप है ।

कार्य कारण के बिना नहीं रह सकता है लेकिन कारण कार्य के बिना रह सकता है । सोना कारण है, गहने कार्य हैं । गहनों (आकृति विशेष) के बिना सोना रह सकता है पर सोने के बिना गहना नहीं रह सकता । जल कारण है, तरंगें कार्य हैं । शांत ब्रह्म कारण है, आपाधापी कार्य है । यह आपाधापी शांत ब्रह्म की सत्ता से होती है और उसीमें लीन हो जाती है । ऐसा कोई सेकंड नहीं जब परमात्मा न हो लेकिन कैसा दुर्भाग्य है कि परमात्मा ही नहीं मिलता ! हकीकत में परमात्मा के सिवाय न कुछ था, न है और न रहेगा लेकिन बेवकूफी इतनी हावी हो गयी कि दूसरा था, है और रहेगा ऐसा दिखता है, परमात्मा नहीं । लहरों की दौड़-धूप में पानी की नीरवता और गहराई भूल गये, इसलिए परेशान हैं ।

जब पार्वतीजी ने भगवान शिवजी से श्रीराम-चरित्र सुनाने की प्रार्थना की, तब भगवान शिवजी भगवान रामजी की महिमा गाते-गाते उनको प्रणाम करते हैं :

राम ब्रह्म ब्यापक जग जाना ।
परमानंद परेस पुराना ॥

'श्रीरामचन्द्रजी तो व्यापक ब्रह्म, परमानंद-स्वरूप, परात्पर प्रभु और पुराणपुरुष हैं । इस बात को सारा जगत जानता है ।'

भगवान शिवजी भगवान् श्रीरामजी का वर्णन प्राणिमात्र के आधारस्वरूप; सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के कारण 'ब्रह्म' के रूप में करते हैं । वास्तव में शिवजी भी वही हैं । शिवजी की महिमा पूछो तो रामजी बोलेंगे : 'शिवजी तो सनातन सत्य हैं । वे ही सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के कारण हैं ।'

जब रामजी बतायेंगे तो अपनेको कार्यस्वरूप मायावी शरीर में और शिवजी को कारण में रखेंगे । शिवजी जब रामजी के लिए बोलेंगे तो अपनेको कार्य में रखकर रामजी को कारण में रखेंगे । शिवजी या रामजी का कारणस्वरूप में वर्णन यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है अपितु सत्य को समझाने का एकदम ऊँचा व उत्तम सिद्धांत है ।

गंगाजी का एक नाम 'जाह्नवी' है । 'गीता' में भगवान ने कहा है : **स्रोतसामस्मि जाह्नवी ।** 'बहनेवाले स्रोतों में जाह्नवी मैं हूँ ।' गंगाजी का जाह्नवी नाम कैसे पड़ा ? जह्नु ऋषि ने गंगा को पी लिया तथा अपनी संकल्पशक्ति से जंघा से बाहर निकाला । तबसे गंगाजी जह्नु ऋषि की पुत्री मानी जाती हैं और इनका नाम 'जाह्नवी' पड़ा । ऋषि कारणस्वरूप में थे और कार्यस्वरूप में गंगाजी आयीं तो पुत्री हो गयीं । हम कार्यस्वरूप में हैं और कारणस्वरूप में गंगाजी हैं इसलिए वे हमारी माता हैं, हम उनके बालक हैं यह भी सत्य है । ऋषि की पुत्री हो गयीं और हमारी माता हैं कार्य-कारण भेद से । ऐसे ही 'भागवत' में श्रीकृष्णजी की महिमा ज्यादा आयेगी, 'शिव पुराण' में शिवजी की महिमा ज्यादा आयेगी- यह कार्य-कारण भेद

लक्ष्य आत्मदृष्टि का बनायें

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

काकभुशुंडिजी वसिष्ठजी से बोले : "हे मुनीश्वर ! केवल एक आत्मदृष्टि ही सबसे श्रेष्ठ है, जिसे पाने से सारे दुःख नष्ट हो जाते हैं !"

एक होती है आत्म-परमात्म दृष्टि, दूसरी होती है व्यवहार दृष्टि-कर्म दृष्टि-भोग दृष्टि अर्थात् ये भोग मिलें तो सुखी रहूँ, ये कर्म करूँ तो सुखी रहूँ, ये फल मिलें तो सुखी रहूँ परंतु वह सुख अल्पकालीन होता है क्योंकि इन्द्रियाँ अल्पकालीन हैं, शरीर अल्पकालीन है और भोग भी अल्पकालीन हैं तो उनका सुख भी अल्पकालीन ही होता है, विकारी होता है। इसलिए भोग दृष्टि, संग्रह दृष्टि, कर्म दृष्टि - ये सब शाश्वत नहीं हैं, एक आत्मदृष्टि ही शाश्वत है।

आत्मा-परमात्मा सदा है । आप अपना लक्ष्य आत्मा-परमात्मा को पाने का अर्थात् आत्मदृष्टि पाने का बना लें । लक्ष्य जब ईश्वरप्राप्ति का नहीं है तो सब करा-कराया खो देते हैं । आत्मदृष्टि नहीं है, आत्मा-परमात्मा की प्राप्ति के लक्ष्य को पाने की तीव्र रुचि नहीं है तो पदवी मिल गयी कि सेवा कर रहे हैं, नहीं... समय पसार कर रहे हैं । लक्ष्य आत्मा-परमात्मा का नहीं हो तो यह आत्मवंचना (अपनेको ठगना) है ।

आत्मवंचनावाला व्यक्ति **अतो भ्रष्टः ततो भ्रष्टः** होता है । वह न भोगियों में सेट हो सकता है, न गुरुभक्तों में सेट हो सकता है क्योंकि लक्ष्य के बिना किया हुआ कर्म बोझा हो जाता है, आत्मवंचना हो जाता है । अतः ईश्वरप्राप्ति का लक्ष्य बना लेना चाहिए, आत्मदृष्टि बना लेनी चाहिए कि 'कुछ भी करके मुझे शाश्वत सुख पाना है, कुछ भी करके मुझे जन्म-मरण से पार होना है । जो शरीर पर जायेगा उसके नाम-रूप-यश आदि के पीछे न पड़ के, जो मैं हूँ-शाश्वत आत्मा-परमात्मा का सनातन सपूत, अपने उस परमात्मा को पाऊँगा, जानूँगा !'- इसके लिए परमात्मा को प्रार्थना करें; ईश्वरभक्ति, गुरुभक्ति, शास्त्रभक्ति करें- इनसे बुद्धि शुद्ध-सात्त्विक होगी । जितने भी यहाँ घाटे हैं, हानियाँ हैं, दुःख हैं सब प्रज्ञापराध के कारण होते हैं ! बुद्धि की कमजोरी से ही ये सारे जन्म-मरण हो रहे हैं ।

प्रज्ञापराधोमूलं सर्वदुःखानाम् ।
प्रज्ञापराधोमूलं सर्वरोगानाम् ।

प्रज्ञापराध को मिटाने के लिए लक्ष्य ईश्वरप्राप्ति का बना लें और प्रज्ञा सात्त्विक रहे ऐसे शास्त्र पढ़ें, ऐसा संग, ऐसा जप, ऐसा चिंतन करें; प्रज्ञा को गिरानेवाला अशुद्ध आहार, अशुद्ध चिंतन, आलस्य, प्रमाद न करें ।

ईश्वरप्राप्ति कठिन नहीं है पर उसकी तड़प, उसकी प्यास हलकी बुद्धि में नहीं होती । हलके कर्म करनेवाले में, कपट करनेवाले में, राग-द्वेष करनेवाले में, पक्षपात करनेवाले की बुद्धि में परमात्मा का प्रकाश नहीं होता । इसलिए बोलते हैं राग-द्वेष न करो, कपट न करो, झूठ न बोलो ताकि बुद्धि पुष्ट हो और ईश्वरप्राप्ति के निर्णयवाली हो जाय । ईश्वरप्राप्ति का निर्णय होते ही सारे दोष मिटने लग जायेंगे और ईश्वर को छोडकर दुनिया को पाने की मति बनेगी तो आप कितने भी साफ-सुथरे हों, फिर भी कुछ दोष आ ही

जायेंगे, दुःख आ ही जायेंगे। ईश्वरप्राप्ति से दुःखों का अंत होता है, फिर प्रारब्धवेग से दुःख आते भी हैं तो उनका महत्त्व नहीं रहता। जैसे, मीरा का इतना विरोध हुआ, शबरी को इतने दुःख मिले, ध्रुव के, प्रह्लाद के जीवन में इतनी कठिनाइयाँ आयीं किंतु उनके लिए वे दुःख बल बढ़ानेवाले हो जाते थे और सारे सुख सेवा का साधन बन जाते थे।

लक्ष्य ईश्वरप्राप्ति का नहीं है तो दुःख कमजोर कर देते हैं, भयभीत कर देते हैं, मूढ़ बना देते हैं और सुख भोगी बनाकर खोखला कर देते हैं। समझो, आप किसीकी सेवा करते हो। उसको विश्वास में ले लिया तो आपको सुख-सुविधा मिल गयी लेकिन उस सुख-सुविधा से आप ईश्वरप्राप्ति के लिए सच्चाई से कर्म कर रहे हैं कि सुख-सुविधा भोग रहे हैं ? सुविधा मिली है मनुष्य-जीवन की अथवा किसी भी आध्यात्मिक जगह पर रहने की तो उसका उपयोग करके आप ईश्वरप्राप्ति करते हैं तो वे सुविधाएँ आपके लिए प्रसाद हो जाती हैं। अगर सुविधा मिली है और उसका उपभोग करके समय पसार करते रहे तो बोझ बन जाती है। लक्ष्य केवल ईश्वरप्राप्ति होने से सारे सद्गुण आते हैं तथा सारी सुंदर सुव्यवस्था होने लगती है और लक्ष्य ईश्वरप्राप्ति का नहीं होने से एक-से-एक सुविधा मिले परंतु आदमी भोग-सामग्री से अपने विनाश का सामान तैयार कर लेता है।

इच्छा के पेट में संसार है तो वह भटकाती रहती है और इच्छा के पेट में भगवान की प्राप्ति हो जाय तो भगवान इच्छा का पेट चीरकर प्रकट हो जाते हैं। इच्छा गर्भरहित नहीं होती। इच्छा के पेट में कुछ-न-कुछ होता ही है। इच्छा के गर्भ में नश्वर पाने का होता है तो जीव भटकता रहता है। इच्छा के गर्भ में अगर शाश्वत की प्राप्ति की माँग हो जाय तो इच्छा का पेट फट जायेगा और शाश्वत प्रकट हो जायेगा। इतना सरल है ईश्वर को पाना !

इच्छा के गर्भ में हो कि 'बस, तुम ही मिलो। तुम कैसे हो, मैं नहीं जानता पर मैं जैसा-तैसा हूँ तेरा हूँ। तेरे बिना मेरे दिन कैसे व्यतीत हो रहे हैं ? खा रहा हूँ, पी रहा हूँ, सो रहा हूँ... मरनेवाले शरीर के लिए इतना कपट हो रहा है पर अभी तक तेरे लिए प्रीति नहीं जगी, मैं कितना अभागा हूँ।' - ऐसी प्रार्थना करें, प्रायश्चित्त करें, जप-ध्यान करें। 'ईश्वर की ओर' पुस्तक पढ़ें, विवेक-वैराग्य बढ़ानेवाला, बुद्धि बढ़ानेवाला 'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' का प्रथम भाग पढ़ें।

ऐसा तो करे नहीं और अक्ल-होशियारी को संसार में ही लगाये तो खुद भी फँसेगा, दूसरे को भी फँसायेगा। मूढ़ व्यक्ति परिस्थितियों से तृप्ति चाहता है और बुद्धिमान अपनी आत्मा से तृप्त रहता है। जो ईश्वरप्राप्ति के रास्ते चलता है वह खुद भी उन्नत होता है, खुद भी मुक्त होता है और दूसरों को भी मुक्त करता है; आप भी तृप्त होता है दूसरों को भी तृप्त करता है। ❑

❋ रोज प्रातःकाल उठते ही ॐ का गान करो। ऐसी भावना से चित्त को सराबोर कर दो कि 'मैं यह शरीर नहीं हूँ। सब प्राणी, कीट, पतंग, गन्धर्व में मेरा ही आत्मा विलास कर रहा है। अरे, उनके रूप में मैं ही विलास कर रहा हूँ भैया !' हररोज ऐसा अभ्यास करने से यह सिद्धांत हृदय में स्थिर हो जायेगा।

❋ लोग प्रायः जिनसे घृणा करते हैं ऐसे निर्धन, रोगी इत्यादि को साक्षात् ईश्वर समझकर उनकी सेवा करना यह अनन्य भक्ति एवं आत्मज्ञान का वास्तविक स्वरूप है।

(आश्रम से प्रकाशित 'जीवन रसायन' पुस्तक से)

महान भगवद्भक्त प्रह्लाद

(गतांक से आगे)

प्रह्लादजी की रुचि प्रायः राज-काज में नहीं रह गयी थी। 'अपना राज्यभार मैं किसे सौंपूँ ?' इसी विचार में वे मग्न रहते थे। वे चाहते थे कि उनका उत्तराधिकारी प्रजाहित में दक्ष हो। प्रह्लादजी अपने तथा चाचा हिरण्याक्ष के पुत्रों को राज्य का अधिकारी समझते थे किंतु वे इस चिंता में रहते थे कि समुचित शिक्षा व स्वयं अनेक उपदेश देने के बाद भी उनमें से कोई ऐसा न था जो प्रह्लादजी के स्वभावानुसार द्विज-देवताओं का भक्त एवं भगवान विष्णु का उपासक हो। उन सबके आन्तरिक भाव पूरे-पूरे आसुरी थे।

शीलापहरण के कारण राज्यच्युत होने के समय से प्रह्लादजी की त्यागवृत्ति और भी बढ़ गयी थी और वह शील एवं समस्त साम्राज्य के पुनः प्राप्त होने से भी कम नहीं हुई। अतएव तपोवन से लौटकर प्रह्लादजी ने फिर से राज्यभार अपने ऊपर रखते हुए भी उसमें ममत्व नहीं रखा। भगवद्भजन में बाधक जानकर वे राज्यभार से सर्वथा दूर ही रहना चाहते थे। उन्होंने अपने चचेरे भाई अन्धक की अनुमति से सारे साम्राज्य को अपने भाइयों तथा पुत्रों में विभाजित कर दिया और उन सब पर राजकुमार विरोचन का एकाधिपत्य रखा। उसके बाद प्रह्लादजी ने तपोभूमि में जाकर परमात्म-ध्यान में निमग्न रहने का निश्चय किया। उनके इस निश्चय से उनकी छायास्वरूपा पतिव्रता पत्नी सुवर्णा बहुत घबरायी। उसने भी उनके साथ तपोभूमि में जाने की इच्छा प्रकट की किंतु त्यागी प्रह्लादजी ने ऐसा करना उचित नहीं समझा। उन्होंने समझा-बुझाकर सुवर्णा को पुत्रों की देखभाल करने हेतु हिरण्यपुर में ही रहने के लिए राजी कर लिया।

प्रह्लादजी अकेले ही नैमिषारण्य को चले गये और वहाँ भगवत्स्मरण में निमग्न रहने लगे। वे राजाधिराज के रूप में तथा तपस्वी-वेश में रहने को समान समझते थे। न जाने कितने त्यागी महात्मा और विद्वान ब्राह्मण उनके समीप जाते एवं भगवद्भक्ति की अनन्यता के आनंद का अनुभव करते थे।

समय पाकर दैत्यराज विरोचन के शासन का समय बीत गया एवं उनके सुपुत्र परम प्रतापी राजा बलि का शासनकाल आ गया। राजा बलि ने अपनी धार्मिकता और प्रताप से साम्राज्य को इतना प्रभावशाली बनाया कि चारों ओर उनकी प्रशंसा-ही-प्रशंसा सुनायी पड़ने लगी। इसी काल में महर्षि दुर्वासा के शाप से देवराज इन्द्र के बुरे दिन आ गये। शाप के प्रभाव और अपने प्रबल पराक्रम से राजा बलि ने इन्द्रासन पर भी अपना अधिकार जमा लिया और यहाँ का शासन मंत्रियों को सौंप अपना निवास स्वर्ग की अमरावतीपुरी में रखा। देवराज इन्द्र तथा उनके अधिकारी अन्यान्य देवगण मारे-मारे फिरने लगे। शाप का समय अभी समाप्त नहीं हुआ था, अतएव देवताओं की रक्षा करनेवाले दयालु भगवान विष्णु भी चुपचाप यह तमाशा देख रहे थे।

स्वर्ग-सिंहासन पर विराजमान परम प्रतापी राजाधिराज राजा बलि अपने पुराने मंत्रियों से, विशेषकर महर्षि शुक्राचार्यजी से अपने पितामह प्रह्लादजी की अनुपम ज्ञान-गरिमा की प्रशंसा सुना करते थे। उनकी अलौकिक भगवद्भक्ति तथा

उनके त्याग की महिमा सुन-सुनकर बलि उनके चरणों के दर्शनों के लिए उत्कण्ठित हो उठते थे। एक दिन बलि ने महर्षि शुक्राचार्यजी से प्रार्थना की कि यदि आप हमारे पितामहजी के दर्शन हमें एक बार करा दें तो बड़ी कृपा होगी। शुक्राचार्यजी ने राजा बलि की प्रार्थना स्वीकार कर ली और तपोभूमि में जाकर प्रह्लादजी से उनके पौत्र की सारी कथा व उनकी प्रार्थना कह सुनायी। प्रह्लादजी संसार से नाता तोड़ चुके थे किंतु अपने आचार्य का वे बड़ा आदर करते थे और वे अपने शरीर के रहते उनकी आज्ञा टालना उचित नहीं समझते थे। त्यागी और विरागी होने पर भी प्रह्लादजी ने उनकी आज्ञा मान ली। शुक्राचार्यजी की आज्ञानुसार वे एक दिन स्वर्ग की अमरावती में जा पहुँचे।

तपस्वी-वेशधारी प्रह्लादजी को देखकर राजा बलि ने सिंहासन से उठकर उनके चरणों में साष्टांग प्रणाम किया और आग्रहपूर्वक उनको अपने सिंहासन पर बैठाया। राजा बलि ने हाथ जोड़कर कहा : ''हे पूज्यपाद पितामहजी! आज मेरे सौभाग्य की सीमा नहीं। आज मैं आपके चरणों के दर्शन से कृतकृत्य हो गया हूँ। आप ही की कृपा और प्रताप से आज मैं तीनों लोकों को जीत सका हूँ। इन्द्र ने छल-बल से आपसे शील-भिक्षा माँग आपको राज्यच्युत किया था। यह बात मेरे हृदय में शूल-सी चुभ रही थी किंतु मैंने तीनों लोकों के आधिपत्य को राजधर्म के अनुसार अपने बाहुबल तथा आपके आशीर्वाद से प्राप्त किया है, अब मेरा हृदय शांत है। फिर भी मेरी यही हार्दिक इच्छा है कि आप इसी सिंहासन पर बैठकर शासन करें और मैं आपके चरणों की सेवा करके अपने जीवन को सफल बनाऊँ। देवराज इन्द्र भी आपको फिर इसी सिंहासन पर आसीन देखें, यही मेरी आन्तरिक कामना है।'' (क्रमशः) ❑

बदला लेने या देनेवाले सात प्रकार के पुत्र

(१) अपनी पूर्वजन्म की रखी धरोहर को लेने के लिए, (२) अपने पूर्वजन्म का ऋण चुकाने के लिए, (३) पूर्वजन्म का वैर लेने के लिए, (४) पूर्वजन्म में प्राप्त अपकार के बदले अपकार करने के लिए, (५) पूर्वजन्म में प्राप्त सेवा-सुख के बदले में सेवा-सुख देने के लिए, (६) पूर्वजन्म में प्राप्त उपकार के बदले में उपकार करने के लिए और (७) निरपेक्ष। इनमें जो जिस काम के लिए पुत्र बनकर आते हैं, वे कर्मानुसार अपना काम पूरा करके मर जाते हैं या कर्मानुसार दीर्घ काल तक जीवित रहकर बदला लेते-देते रहते हैं।

केवल पुत्र ही नहीं- पत्नी, पति, भाई, बहिन, नौकर तथा गौ आदि पशु तक कर्म-ऋण लेने या चुकाने के लिए पूर्वजन्मानुसार संबंध जोड़कर सीमित या दीर्घ काल के लिए प्राप्त होते हैं।

- हनुमान प्रसाद पोद्दार (भाईजी)

✻ सबके प्रति समता का भाव रखना, धनादि के लिए विशेष खटपट में न पड़ना, सत्यभाषण करना, भोगों से विरक्त रहना और कर्म में आसक्त न होना- इन पाँच बातों के होने से मनुष्य सुख पा सकता है।

✻ जिसे सुख की इच्छा हो, उसे वैराग्य का ही आश्रय लेना चाहिए। जो पुरुष धनोपार्जन की चिन्ता छोड़कर उपरत हो जाता है, वह सुख की नींद सोता है।

✻ जो मनुष्य अपनी समस्त कामनाओं को पा लेता है और जो उनका सर्वथा त्याग कर देता है, उन दोनों में कामनाओं को पानेवाले की अपेक्षा त्यागनेवाला ही श्रेष्ठ है।

जरा-व्याधिनाशक रसायन चिकित्सा

लाभोपायो हि शस्तानां रसादीनां रसायनम्।

'शरीर को स्वस्थ रखने के लिए उत्तम रस-रक्तादि धातुओं की प्राप्ति जिस उपाय के द्वारा की जाती है, उसे रसायन चिकित्सा कहते हैं।'

(अष्टांगहृदय, उत्तरस्थान : ३९.२)

यह आयुर्वेद की अनमोल देन है। इससे जरा अर्थात् अकाल वार्धक्य व व्याधियों का नाश होता है। युवा व्यक्ति में जिस प्रकार बल, बुद्धि, प्रभा, वर्ण आदि की उपस्थिति पायी जाती है, वैसी ही उपस्थिति रसायन चिकित्सा के द्वारा वृद्धावस्था तक पायी जाती है।

रसायन औषधियों के सेवन से मनुष्य को दीर्घायुष्य, स्मरणशक्ति, धारणाशक्ति, आरोग्य, तारुण्य, वर्ण, प्रभा, उत्तम स्वर, देह व इंद्रियों में उत्तम बल, शुक्रधातु की प्रचुरता व सुंदरता- इन सबकी प्राप्ति होती है।

आँवला, हरीतकी (हरड़), अश्वगंधा, शतावरी, पुनर्नवा, गिलोय, ब्राह्मी, जीवंती आदि श्रेष्ठ रसायन औषधियाँ हैं। इनमें आँवला व हरीतकी सर्वश्रेष्ठ हैं।

आमलकं वयःस्थापनानां, हरीतकी पथ्यानां श्रेष्ठम्।

'रोगनाशन में हरीतकी श्रेष्ठ है व वयःस्थापन में (वृद्धावस्था रोकने में) आँवला सर्वश्रेष्ठ है।'

(चरक संहिता, सूत्रस्थान : २५.४०)

ये दोनों द्रव्य शरीर से विकृत दोष-मलादि को बाहर निकालकर स्रोतसों की शुद्धि व अग्नि को प्रदीप्त कर सारभूत धातुओं की उत्पत्ति करते हैं।

रसायन प्रयोग :

१. आँवला : शरद पूर्णिमा के बाद पुष्ट हुए ताजे आँवलों के रस में घी, शहद व मिश्री मिलाकर सेवन करने से अकाल वार्धक्य के लक्षण नष्ट होते हैं।

आँवले के रस में प्रकृति-अनुसार विभिन्न द्रव्य मिलाकर सेवन करने से वह विशेष लाभदायी होता है।

(अ) कफप्रकृति - आँवला रस + १ ग्राम पीपर + ५ ग्राम शहद

(ब) पित्तप्रकृति - आँवला रस + १ ग्राम जीरा + ५ ग्राम मिश्री

(स) वातप्रकृति - आँवला रस + १० ग्राम घी

(द) **रक्त की शुद्धि व वृद्धि के लिए –**

आँवला रस + १ ग्राम हल्दी + ५ ग्राम शहद।

(आँवले के रस की मात्रा - १५ से २० मि.ली.)

२. हरड़ : दो बड़ी हरड़ (अथवा ३ से ४ ग्राम हरड़ चूर्ण) को घी में भूनकर नियमित सेवन करने से व घी पीने से शरीर में बल चिरस्थायी होता है।

ऋतु-अनुसार हरड़ सेवन-विधि :

ऋतु-अनुसार निम्न द्रव्य दिये गये अनुपात में मिलाकर प्रातः हरीतकी का निरंतर सेवन करने से सभी प्रकार के रोगों से रक्षा होती है।

ऋतु	मिश्रण	अनुपात
शिशिर	हरड़ + पीपर	८:१
वसंत	हरड़ + शहद	समभाग
ग्रीष्म	हरड़ + गुड़	समभाग
वर्षा	हरड़ + सैंधव	८:१
शरद	हरड़ + मिश्री	२:१
हेमंत	हरड़ + सोंठ	४:१

(हरड़ चूर्ण की मात्रा : ३ से ४ ग्राम)

३. शतावरी : शतावरी की ताजी जड़ का १० से २० मि.ली. रस दूध में मिलाकर पीने से शरीर बलवान व पुष्ट होता है। शुक्र व ओज क्षय के कारण उत्पन्न शारीरिक व मानसिक दुर्बलता को दूर करने के लिए शतावरी अत्यंत उपयुक्त है। ताजा रस संभव न हो तो ३ से ५ ग्राम शतावरी चूर्ण मिश्रीयुक्त दूध में मिलाकर लें।

४. गिलोय : गिलोय का १० से २० मि.ली. रस मिश्री अथवा शहद मिलाकर पीयें। रक्त व मज्जा धातु को पुष्ट करनेवाली गिलोय एक महत्त्वपूर्ण मेध्य (बुद्धिवर्धक) रसायन औषधि है।

५. पुनर्नवा : ताजी पुनर्नवा की २० ग्राम जड़ पीसकर दूध के साथ एक वर्ष तक सेवन करने से जीर्ण शरीर भी नया हो जाता है। शरीर को पुनः नयापन देती है, इसलिए इसे पुनर्नवा कहा गया है। ताजी पुनर्नवा उपलब्ध न होने पर ५ ग्राम पुनर्नवा चूर्ण का उपयोग कर सकते हैं।

६. अश्वगंधा अथवा विदारीकंद या सफेद मूसली का २ से ३ ग्राम चूर्ण गाय के दूध, घी अथवा गर्म जल के साथ लेने से शरीर अश्व के समान बलवान हो जाता है।

७. शिशिर ऋतु (२२ दिसम्बर से १८ फरवरी तक) में प्रतिदिन १५-२५ ग्राम काले तिल जल के साथ सेवन करने से शरीर बहुत पुष्ट होता है व दाँत मृत्युपर्यंत दृढ़ रहते हैं। इसके बाद २-३ घंटे तक कुछ न लें।

८. उपर्युक्त औषधियाँ उपलब्ध न हो सकें तो जल, दूध, घी व शहद ये अलग-अलग या दो-दो या तीन-तीन या चारों को एक साथ असमान मात्रा में मिलाकर नित्य प्रातः सेवन करने से भी आयु स्थिर होती है। दूध में शहद मिलाना हो तो दूध गुनगुना लें।

उपर्युक्त प्रयोगों में दूध, घी गाय का ही लें तथा शुद्ध शहद का उपयोग करें।

पुनर्नवा, शतावरी, गिलोय आदि औषधि वनस्पतियों को अपने घर के आसपास सरलता से उगाया जा सकता है।

निर्देश : श्री चरकाचार्यजी के अनुसार संयमी व सदाचारी पुरुषों को रसायन का सेवन आदरपूर्वक करना चाहिए। बालक व वृद्ध रसायन के अधिकारी नहीं हैं। युवा व प्रौढ़ावस्था में रसायन का सेवन किया जाता है। इसका सेवन प्रातः खाली पेट करें। इसके साथ देश, ऋतु, प्रकृति व जठराग्नि के अनुसार हितकर आहार-विहार करें। स्त्री-संपर्क का त्याग आवश्यक है।

ये सिद्ध ऋषि-मुनिप्रदत्त दीर्घ व निरामय जीवन की कुंजियाँ हैं। इन साधारण प्रयोगों में असंख्य रोगों का प्रतिकार व शरीर को बलवान बनाने की असाधारण शक्ति छुपी हुई है। इनका उपयोग कर हम अनमोल स्वास्थ्य अत्यल्प मूल्य व प्रयास से ही प्राप्त कर सकते हैं। ❐

सूक्तिसुधा

*** अमृतत्वमेरिरे विष्ट्वी शमीभिः सुकृतः सुकृत्यया।**

पुण्यात्मा सत्कर्म से अमरत्व को प्राप्त करते हैं। (ऋग्वेद : ३.६०.३)

*** ऋतस्य नाभावभि सं पुनाति।**

सत्य भाषण के द्वारा मनुष्य अपने-आपको पवित्र करता है। (अथर्ववेद : १८.३.४०)

*** वर्च आ धेहि मे तन्वां३सह ओजो वयो बलम्।**

शरीर में तेज, साहस, ओज, आयुष्य और बल की वृद्धि करो। (अथर्ववेद :१९.३७.२)

*** यः पृणाति स ह देवेषु गच्छति।**

जो दान देता है, वह देवत्व को प्राप्त होता है। (ऋग्वेद :१.१२५.५)

खर्राटे : कुदरत का अलार्म

नींद में खर्राटे आना कई बार सामान्य होता है, कई बार थकान के कारण खर्राटे आते हैं तथा कई बार यह लक्षण किसी गंभीर बीमारी के साथ जुड़ा हुआ होता है । ६०% मनुष्यों में यह लक्षण उच्च रक्तदाब, डायबिटीज, कोलेस्टेरॉल की अधिकता, हृदयरोग जैसी बीमारियों के कारण पाया गया। ऐसे व्यक्तियों को मक्खन, मलाई, पनीर, दही, केला, फ्रीज का पानी, मिठाई, तले व चिकनाईवाले पदार्थ नहीं खाने चाहिए। दिन में सोना, एअर कण्डिशन में रहना, सतत बैठे रहना छोड़ देना चाहिए । खर्राटे आना यह कुदरत का अलार्म है। कुदरत खर्राटों द्वारा मनुष्य को अपनी जीवनशैली ठीक करने की चेतावनी देती है । ऐसे व्यक्ति आहार में सुधार के साथ नियमित आसन-प्राणायाम-कसरत करें । २० ग्राम अदरक के रस (लगभग ४ चम्मच) में ५ ग्राम गुड़ मिलाकर सुबह खाली पेट २१ दिन तक लें । आवश्यक हो तो ५ दिन के अंतर से यह प्रयोग पुनः दोहराया जा सकता है । इन दिनों में मिर्च, राई, मेथी, हींग जैसी गरम वस्तुओं का सेवन न करें ।

❋ जम्हाई रात्रि को आती हो तो ठीक है परंतु दिन में ज्यादा जम्हाइयाँ आती हों तो निस्तेज तथा निरसता की खबर देता है । वह भविष्य में होनेवाली नर्व्हस सिस्टिम (तंत्रिका तंत्र) संबंधित बीमारी का संकेत हो सकता है । ऐसे लोगों को अदरक व लहसुन का सेवन वैद्यकीय सलाह से करना चाहिए । ❒

द्विषो अंहो न तरति ।
ईश्वरकृपा से व्यक्ति पापकर्मों की तरह शत्रुओं को जीत लेता है ।
(सामवेद, पूर्वार्चिक : २.४.२६.६)

बाल संस्कार केन्द्र एवं विद्यार्थी उज्ज्वल भविष्य निर्माण शिविर प्रशिक्षण

१. **'बाल संस्कार केन्द्र' प्रशिक्षण** : जनवरी २००८ के 'उत्तरायण ध्यान योग शिविर' में दिनांक १२ से १४ जनवरी तक 'बाल संस्कार केन्द्र' का उत्तम रीति से संचालन करने संबंधित मार्गदर्शन दिया जायेगा ।

२. **शिविर शिक्षकों का चयन** : दिनांक १४ और १५ जनवरी को उत्तरायण शिविर में देश भर में चलाये जा रहे 'विद्यार्थी उज्ज्वल भविष्य निर्माण शिविर' के आयोजन व उसमें दी जानेवाली संस्कार शिक्षा संबंधित मार्गदर्शन भी दिया जायेगा । इसमें बाल संस्कार केन्द्र शिक्षकों का साक्षात्कार लेकर उनमें से कुछ विशेष शिक्षक 'शिविर शिक्षक' के रूप में अधिकृत किये जायेंगे । पिछले प्रशिक्षण में अधिकृत किये गये शिक्षक भी इस प्रशिक्षण में अवश्य भाग लें ।

'योग व उच्च संस्कार शिक्षा' कार्यक्रम एवं 'युवाधन सुरक्षा अभियान' में सम्मिलित होकर विद्यार्थी संयमी, एकाग्र व लक्ष्यनिष्ठ बनते हैं, उनमें सर्वांगीण सफलता का आत्मविश्वास निर्मित होता है । श्री योग वेदांत सेवा समिति के पदाधिकारी व शिविर शिक्षक अपने-अपने क्षेत्रों में इस कार्यक्रम के आयोजन एवं कार्यप्रणाली विषयक मार्गदर्शन प्राप्त करने हेतु उत्तरायण शिविर में उपस्थित रहें । दिनांक १५ जनवरी की सुबह उनके लिए पूज्यश्री और श्री सुरेशानंदजी के मार्गदर्शन में एक विशेष सत्र होगा ।

सम्पर्क : 'बाल संस्कार केन्द्र' विभाग ।
श्री अखिल भारतीय योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, अमदावाद ।
दूरभाष : ३९८७७७४९, ६६११५७४९. ❒

'ऋषि प्रसाद प्रतिनिधि'

२१ अक्टूबर को दशहरे के दिन पूज्यश्री सीकर (राज.) पहुँचे। स्थानीय श्री रामलीला मैदान के श्री रामलीला मंच पर एक शाम राम के नाम हुई।

शरद पूर्णिमा पर दर्शन-सत्संग २४ व २५ अक्टूबर को अमदावाद (गुज.) में व २६ से २८ अक्टूबर तक दिल्ली में सम्पन्न हुआ। शरद पूर्णिमा की रात्रि में चन्द्रमा की प्रखर किरणों से पुष्ट खीर की प्रसादी उपस्थित श्रद्धालुओं में वितरित की गयी। दमा के मरीजों को रोग-निवारण हेतु आयुर्वेदिक औषधियों से युक्त विशेष खीर की प्रसादी निःशुल्क दी गयी। यह दवा दमा के मरीजों को प्रत्येक शरद पूनम पर दी जाती है। भारत भर के विभिन्न आश्रमों में भी दवा उपलब्ध करायी गयी। पूज्यश्री ने मधुर खीर के साथ मधुविद्या का अध्यात्म-प्रसाद परोसते हुए अपने सच्चिदानंद स्वभाव को जाग्रत करने की सीख दी।

पूज्यश्री ने कहा : ''आप अपने साथ अन्याय न कीजिये। अपने साथ अन्याय क्या है ? अपने स्वभाव को दबाना व अपनेको पर-स्वभाव में उलझा देना यह अपने साथ अन्याय है। सत्-चित्-आनंद अपना स्वभाव है। अपनेको असत्-जड़-दुःख से जोड़कर अपने साथ अन्याय करते हैं।''

तीर्थराज पुष्कर के एकान्त आश्रम से ब्यावर (राज.) जाते हुए रास्ते में एक शाम नसीराबाद (राज.) के नाम रही। ३ व ४ नवम्बर को ब्यावर में पूज्यश्री की अमृतवाणी की ज्ञानगंगा बही। शब्दशक्ति की महिमा समझाते हुए पूज्य बापूजी ने कहा : ''शब्दों में बड़ी अद्‌भुत शक्ति है। शब्दों का उपयोग करके सेल्समेन सफल होते हैं, लोग बड़े-बड़े पदों पर पहुँच जाते हैं। इसमें बोलनेवाले को अपनी शक्ति व सूझबूझ लगानी पड़ती है। शब्दों में मंत्र ज्यादा प्रभावी होता है। इससे दैवी शक्तियों का अनुग्रह प्राप्त होता है। मंत्र में जापक की लगन आवश्यक है परंतु इससे भी ज्यादा भगवान की सत्ता काम करती है। अगर कोई अनर्गल शब्द बोले तो उसे लोग दुत्कारेंगे परंतु दुष्ट चित्तवाला मनुष्य भी अगर दुर्भावपूर्वक भी हरिनाम का उच्चारण करता है तो उसके समस्त पापों का हरण होता है।''

४ नवम्बर को भंडारे के साथ ही सत्संग की पूर्णाहुति करके पूज्यश्री मांडल आश्रम (राज.) होते हुए भीलवाड़ा (राज.) पहुँचे। वहाँ ५ व ६ नवम्बर को ज्ञान-भक्ति-योगवर्षा से भीलवाड़ावासी धनभागी हुए।

७ नवम्बर की शाम नाथद्वारा (राज.) के नाम रही। इस अल्प समय के लिए प्राप्त दर्शन-सत्संग से स्थानीय श्रद्धालुवृंद श्रद्धा-प्रेम से अभिभूत नजर आये। एक सत्र के इस कार्यक्रम में विराट जनमेदनी उमड़ पड़ी। ७ नवम्बर को धनतेरस के दिन सारा देश पंच-दिवसीय पर्वपुंज दीपावली के शुभारंभ में निमग्न था तो गरीबनवाज पूज्य बापूजी भीलवाड़ा आश्रम से रवाना हुए गरीब-आदिवासी बहुल क्षेत्र गोगुन्दा के लिए। अगले दिन छोटी दीवाली को यहाँ विशाल भंडारा सम्पन्न हुआ। जिसमें गोगुन्दा (राज.) व आसपास के हजारों गरीब-आदिवासी सम्मिलित हुए। आदिवासियों का शोषण देखकर प्राणिमात्र के परम हितैषी पूज्य बापूजी का हृदय द्रवीभूत हो गया। मानव-जीवन को सफल बनाने के लिए पूज्य बापूजी ने भक्ति व जप की महिमा समझायी। पूज्यश्री ने आदिवासियों को दुःख में भी सुखी रहने तथा अभाव में भी प्रसन्न रहने की कला सिखायी।

पूज्यश्री के प्रत्यक्ष मार्गदर्शन में भंडारा

सम्पन्न हुआ। भोजनोपरान्त अन्न, वस्त्र, कम्बल, मिठाइयाँ, दैनिक जीवनोपयोगी अनेक सामग्री व दक्षिणा (नगद राशि) आदि वितरित की गयी।

९ नवम्बर, कार्तिक कृष्णपक्ष अमावस्या अर्थात् ५ दिवसीय पर्वपुंज दीपावली का प्रमुख दिन। इस दिन जहाँ एक ओर सम्पूर्ण देशवासी अपने घर-आँगन को दीपों की जगमगाहट से सजाने-सँवारने में, हर्षोल्लास में सराबोर थे, वहीं दूसरी ओर पूज्यश्री तथा उनके लाड़ले भक्तवृंद और आश्रमवासी कोटडा (राज.) के अत्यंत पिछड़े, गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करनेवाले आदिवासियों के बीच पहुँचे। उन्हें भरपेट भोजन कराकर, उनकी संतुष्टि से ही अपनी तृप्ति व प्रसन्नता का अनुभव करते हुए सेवारत भाइयों-बहनों ने खूब उत्साह का परिचय दिया। पूज्यश्री ने भक्ति व कीर्तन की भावगंगा बहायी। आदिवासियों को उनके उज्ज्वल इतिहास का परिचय कराते हुए पूज्य बापूजी ने कहा : ''महाभारत काल में भारतवासी सोने के बर्तनों में भोजन करते थे। विदेशी लुटेरों द्वारा भौतिक सम्पदा लुट जाने के बाद भी आज बाहर से गरीब दिखनेवाले आदिवासी दिल के अमीर हैं। साधु-संतों की सेवा में, भक्ति में अभी भी अमीर हैं।''

पूज्य बापूजी ने आगे कहा : ''मैं आज दीपावली की सुबह यहाँ सूर्योदय के पूर्व घूमने निकला तो चारों तरफ से रुदन सुनायी दिया। किसीने बताया कि जो मर चुके हैं उनकी याद में पर्व के दिन यहाँ रोने का रिवाज है।

यह किसी विधर्मी का षड्यंत्र है क्योंकि शास्त्रों में पर्व के दिन रोने की मनाही है। पर्व के दिन आनन्द मनाओ। मैं तो आप सबको सुखी देखना चाहता हूँ। यही मेरी दीवाली है।''

गरीबों-आदिवासियों में कपड़े, कम्बल, तेल, जूते-चप्पल, राशन, बर्तन, मिठाई, मोमबत्ती, दक्षिणा (नगद राशि) आदि जीवनोपयोगी सामग्री वितरित की गयी। ९ नवम्बर की शाम पूज्य बापूजी का अमदावाद आश्रम में पदार्पण हुआ। साधकों ने हाथ में दीप लेकर पूज्य बापूजी का स्वागत किया। भौतिक दीवाली का उद्देश्य बताते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''व्यवहारिक दीवाली के पीछे हमारा उद्देश्य परमार्थिक दीवाली का है। विकारों का, अज्ञान का दिवाला निकल जाय और आत्मसुख की जगमगाहट का अनुभव हो जाय, दीवाली मनाने का यही उद्देश्य रहा है।''

दीवाली तथा नूतन वर्ष के पर्व पर पूज्यश्री ने भौतिक सुख के साथ आध्यात्मिक उन्नति की प्रेरणा व मार्गदर्शन भी दिया।

१७ नवम्बर की सुबह ९.२० बजे ताजपुरा (गुज.) के १०१ वर्षीय पूज्य नारायण बापू ब्रह्मलीन हो गये। अगले दिन हुए इन दिव्य विभूति के अंतिम संस्कार के अवसर पर उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करने पूज्य बापूजी ताजपुरा पहुँचे। अदृश्य होने के साथ अनेक दिव्य शक्तियों के स्वामी अपने मित्रसंत को पूज्यश्री ने भावभीनी श्रद्धांजलि दी। इस अवसर पर आबू की गुफा में उनके साथ बिताये दिन याद कर पूज्यश्री ने अपने व उनके बीच के आत्मीय संबंधों की चर्चा की।

१८ नवम्बर को ककरोलिया (बोड़ेली, गुज.) स्थित नवनिर्मित आश्रम में पूज्य बापूजी का पदार्पण हुआ। पूज्य बापूजी इस शांत, एकान्त प्रदूषणरहित वातावरण में ३ दिन रहे। यहाँ वराछा मंडली द्वारा २० नवम्बर की सुबह भक्ति-जागृति यात्रा निकाली गयी। शाम को सत्संग का एक सत्र संपन्न हुआ।

१८ नवम्बर को बड़ौदा (गुज.) में श्री सुरेशानंदजी के नेतृत्व में विशाल संकीर्तन यात्रा निकाली गयी। मंगल प्रतीक सुसज्जित कलश लिये महिलाएँ, पूज्यश्री की आकर्षक झाँकियों से सुसज्ज अनेक वाहन, बाल संस्कार केन्द्र के बच्चों द्वारा प्रदर्शित झाँकियाँ, व्यसनमुक्ति झाँकियाँ आदि संकीर्तन यात्रा में आकर्षण के केन्द्र रहे। एक प्रमुख आकर्षण रही श्री सुरेशानंदजी की संगीतबद्ध स्वरलहरियाँ और उन पर थिरकते पूज्य बापूजी

के हजारों दीवाने। जिस मार्ग से भी ये दीवाने गुजरते थे वहाँ का वातावरण हरिमय हो जाता था। लोग बरबस घर से बाहर अथवा छत पर खिंचे चले आते थे। जो वहाँ मौजूद नहीं थे, वे भी इस आनंदमय संकीर्तन यात्रा के उन आनंदित क्षणों को वी.सी.डी. से देखकर स्वयं आनंदित हो सकते हैं।

२२ से २५ नवम्बर तक बड़ौदा (गुज.) में विशाल सत्संग समारोह सम्पन्न हुआ। प्रथम दो दिन विद्यार्थी शिविर में गुजरात के अलावा देश के अनेक प्रांतों से बड़ी संख्या में विद्यार्थी सम्मिलित हुए। श्रद्धालुओं की विराट संख्या को देखते हुए समिति ने विशाल मंडप बनाया था। सुचारु ध्वनि-व्यवस्था के साथ ही पर्याप्त संख्या में क्लोज सर्किट टीवी. व विडियो प्रोजेक्टर भी लगाये गये थे। पूज्यश्री ने जहाँ एक ओर विद्यार्थियों को विद्या के क्षेत्र में तरक्की के गुर बताये वहीं दूसरी ओर उपस्थित श्रद्धालुओं को जीवन में आनेवाले खट्टे-मीठे अनुभवों में सम व प्रसन्न रहने की सीख दी।

ब्रह्मविद्या के मर्मज्ञ पूज्यश्री ने अपनी अनुभव-संपन्न अमृतवाणी में अध्यात्म विद्या का प्रसाद बाँटा। शरीर स्वस्थ, मन प्रसन्न और बुद्धि एकाग्र करने की अनेक युक्तियाँ पूज्य बापूजी ने बतायीं। पूज्यश्री ने विद्यार्थियों में शुभ संस्कारों का सिंचन करते हुए छात्र-छात्राओं और श्रद्धालुओं की विराट भीड़ की अध्यात्म के प्रति अभिरुचि को देखते हुए कहा : ''भारतीय संस्कृति के संस्कारों से सुसज्ज और वैदिक ज्ञान से सुसम्पन्न आज के विद्यार्थी ही निकट भविष्य में समग्र विश्व के तमाम क्षेत्रों में अग्रणी होंगे।''

२९ व ३० नवम्बर को पेटलावद (म.प्र.) में दो दिवसीय सत्संग संपन्न हुआ। यहाँ के भक्तों की वर्षों की गुहार फलित हुई और १७ वर्ष के बाद पूज्य बापूजी यहाँ आये। १ व २ दिसम्बर को रतलाम (म.प्र.) में पूज्यश्री की आत्मस्पर्शी अमृतवाणी से संपूर्ण मालवा क्षेत्र सराबोर हुआ। मध्य प्रदेश के गृह एवं परिवहन मंत्री व पूज्य बापूजी के पुराने साधक श्री हिम्मत कोठारी ने भी मंत्रमुग्ध होकर सत्संग-अमृत का रसपान किया तथा पूज्यश्री का प्यार भरा आशीर्वाद प्राप्त कर धन्यता का अनुभव किया। ☐

दक्षिण अफ्रीका में अध्यापिका ने खड़ा किया नया बखेड़ा

हिन्दुओं को नरक और ईसाइयों को स्वर्ग !

डर्बन (दक्षिण अफ्रीका) : एक स्थानीय हाईस्कूल ने भारतीय मूल की छात्रा द्वारा नाक में नथ पहनने पर आपत्ति कर हंगामा खड़ा किया था। अब इसी स्कूल की एक टीचर ने भारतीयों के प्रति यह टिप्पणी जड़ दी कि 'हिन्दू नरक में जायेंगे क्योंकि वे मूर्तिपूजा करते हैं, ईसाई स्वर्ग में जायेंगे।'

डर्बन के इस हाईस्कूल में धर्म पर बहस के दौरान यह शर्मनाक वाकया हुआ जब एक विद्यार्थी ने कहा : वह हिन्दू है तो टीचर ने तपाक्-से जवाब दिया हिन्दू लोग मूर्तिपूजक हैं इसलिए नरक में जायेंगे। टीचर ने छात्रा को ढाढ़स बँधाया कि वह उसके लिए प्रार्थना करेगी। छात्रा के माता-पिता इस टिप्पणी से हतप्रभ हैं। उन्होंने स्कूल पर ईसाइयत के प्रचार का आरोप लगाते हुए 'मानव अधिकार आयोग' के समक्ष गुहार की है।

आयोग के अध्यक्ष जोडी कॉलपेन ने कहा : यह घटना सिद्ध करती है कि कुछ लोगों को अभी तक यह पता नहीं है कि हमारा देश बहुधर्मी है। विद्यालय वह स्थान है, जहाँ सहिष्णुता व समझदारी जैसे नैतिक मूल्यों को बढ़ावा मिलना चाहिए। धर्म के नाम पर किसी तरह की श्रेष्ठता का दावा करना और यह कहना कि हमारा भगवान तुम्हारे से ज्यादा शक्तिशाली है, निश्चय ही देश के संविधान की भावना के विरुद्ध है। आयोग ऐसे मामलों के खिलाफ है और हम इसकी जाँच करेंगे।

डर्बन हाईस्कूल नस्लभेद के लिए कुख्यात है। इससे पूर्व नाक में नथनी और लौंग पहनने पर पाबंदी लगाकर इसने विवाद खड़ा किया था। अदालत ने इस मामले में हस्तक्षेप कर विद्यालय को आदेश दिया था कि किसी भी छात्र को उसकी सांस्कृतिक विरासत के पालन से रोका नहीं जा सकता। यह मामला मीडिया में भी चर्चा का विषय रहा। इसके पक्ष और विपक्ष में काफी बयानबाजी होती रही। **(नई दुनिया, इन्दौर, ३०-१०-२००७)**

पूज्य बापूजी के आत्मसाक्षात्कार दिवस पर दरिद्रनारायणों के बीच व्यारा, जि. सूरत (गुज.) में कंबल व फल-वितरण तथा वाशिम (महा.) में अनाज-वितरण।

सिलीगुड़ी, जि. दार्जिलिंग (प.बंगाल) तथा धुलिया (महा.) के गरीब बालकों में कपड़े, मिठाई, सत्साहित्य व जीवनोपयोगी वस्तुओं का वितरण।

शरद पूर्णिमा की रात्रि में दमे के दर्दियों को खीर में विशिष्ट मंत्रजपपूर्वक दवाई मिलाकर सेवन करने का प्रयोग कराया गया तथा मलाजखण्ड, जि. बालाघाट (म.प्र.) के छात्रों को ध्यान का अभ्यास कराया गया।

मध्य प्रदेश के गृह एवं परिवहन मंत्री तथा पूज्य बापूजी के पुराने साधक-सत्संगी श्री हिम्मत कोठारी पूज्यश्री के सत्संग का तल्लीन होकर रसपान करते हुए।

Posting at Rishi Prasad PSO between 1st to 14th of E.M. Back issue at PSO-AHD * Posting at ND.PSO on 5th & 6th of E.M. * Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.
1 December 2007
RNP. NO. GAMC 1132/2006-08
WPP LIC NO. GUJ-207/2006-08
RNI NO. 48873/91
DL(C)-01/1130/2006/08
WPP LIC NO.U(C)-232/2006/08
G2/MH/MR-NW-57/2006-08
WPP LIC NO. MH/MR/14/07
'D' NO. MH/MR/TECH-47/4/07